अस्तर पर छपे मूर्तिकला के प्रतिरूप में राजा शुद्धोदन के दरबार का वह दृश्य जिसमें तीन भविष्यवक्ता भगवान बुद्ध की माँ—रानी माया का व्याख्या कर रहे हैं। उनके नीचे बैठा लिपिक व्याख्या का विवरण लिख रहा है। भारत में लेखन कला का सम्भवतः सबसे प्राचीन और चित्रलिखित अभिलेख।

नागार्जुनकोंडा दूसरी सदी ई

सौजन्य राष्ट्रीय संग्रहालय

भारतीय साहित्य के निर्माता

अप्पर

लेखक

जी वन्मीकनाथन

अनुवादिका

इंदिरा 'नूपुर'



साहित्य अकादेमी

Appar Hindi translation by Indira 'Noopur' of G Vanmikanathan's monograph in English on the Tamil *saint poet*, Sahitya Akademi New Delhi (1987) Rs 5

साहित्य अकादेमी

प्रथम संस्करण 1987

साहित्य अकादेमी

प्रधान कार्यालय

रवीन्द्र भवन 35 फीरोजशाह रोड *नयी दिल्ली 110001*

क्षेत्रीय कार्यालय

ब्लाक 5 बी रवीन्द्र सरोवर स्टेडियम, कलकत्ता 700029

29 एल्डाम्स रोड (द्वितीय मंजिल), तेनामपेट मद्रास 600018

172 मुम्बई मराठी ग्रन्थ संग्रहालय मार्ग, दादर बम्बई 400014

मूल्य

पाँच रुपये

मुद्रक

मित्तल प्रिंटर्स

दिल्ली 110032

विषय-सूची

१

सेवा परमोधम

सातवी शताब्दी मे तमिलनाडु म एक सत हुए थे, जिनके जीवन का आदश था—सेवा परमोधम । उन्होने एक गीत म लिखा है

मेरा कत्तव्य है
सेवा करना
और सन्तुष्ट रहना ।

और वास्तविकता तो यह है कि उन्होने इससे पहलेवाली पक्ति म अपने इस कतव्य के प्रति एक शत रखी है । उसी गीत म एक स्थान पर उन्होने लिखा है

दूसरी ओर
तुम्हारा है कत्तव्य
कि तुम रखो
बाध कर मुझे ।

उपरोक्त दोनो पक्तियो द्वारा उन्होने सष्टि क सजनहार के प्रति अपने और अपने प्रति उस विश्व सजनहार क कतव्यो की सम्पूण व्याख्या की है ।

उनके माता पिता ने उनका नाम रखा था— मरुलनीक्यार और स्वय प्रभु ने उन्हे तिरु नावुक्करसर की पदवी प्रदान की थी । उनके मूल नाम को तो लोग बहुत पहले ही भूल गय । उनका दूसरा नाम भी आज केवल विद्यार्थियो के बीच मे ही प्रचलित है किन्तु उनका एक और नाम है जो उन्हे एक 6 8 वष के बालक से प्राप्त हुआ था । जब तिरु नावुक्करसर पहली बार उस बालक से मिले वे चालीस वष या उससे भी अधिक आयु के थे । इस वरिष्ठ व्यक्ति को देखकर बालक ने अत्यन्त स्नेह और सहज भाव से उन्हे अप्परे ! ओ पापा !' (अर्थात् हे पिता !) कहकर सम्बोधित किया । और यही वह नाम है जिससे तमिलनाडु का हर व्यक्ति उन्हे जानता है । यह एक विडम्बना ही है कि 'अप्पर (पिता) की अपनी कोई सतान न थी किन्तु जिस प्रकार भगवान् को समस्त ससार परम पिता' कहता है उसी प्रकार समस्त ससार उन्हे भी अप्पर' (पिता) या पापा के नाम से सम्बोधित करता है ।

अप्पर सम्भवत ६१० ई० से ६९१ ई० तक अर्थात् लगभग इक्यासी वष की आयु तक जीवित रहे । हम यह कह सकते हैं कि वे लगभग पूरी सातवी शताब्दी मे विद्यमान रहे । एक प्रकार से हम सातवी शताब्दी को 'अप्पर शताब्दी' भी

यह सकते हैं। तमिलनाडु के लोगों के सामाजिक और धार्मिक जीवन पर—विशेष कर मदुराई से मद्रास और उसके भी आगे तक के जनजीवन पर उनका बहुत ही गहरा प्रभाव था। वह बालक जिसने उन्हें 'ओ पापा' कहकर सम्बोधित किया था, उनका नाम था—तिरु ज्ञान सम्बन्धर। अप्पर को जिनने वर्ष का जीवनदान मिला था तिरु ज्ञान सम्बन्धर के हिस्से में केवल उसका पाँचवाँ अंश ही आ पाया था। उसने जब अप्पर के जीवन में प्रवेश किया, तब अप्पर लगभग चालीस वर्ष के थे। फिर भी तमिल भाषा में रचे गये भक्ति साहित्य में जिन्हें तिरुमुर कहते हैं तिरु ज्ञान सम्बन्धर की कृतियों के तीन ग्रन्थ अप्पर की कृतियों के तीन ग्रन्थों से पहले रखे जाते हैं। हम कह सकते हैं कि तिरु ज्ञान सम्बन्धर का जीवन काल ६४२ ई० से ६५८ ई० के बीच था। उनकी कृतियों को अप्पर की कृतियों से पहले स्थान देने का कारण यह है कि जिस समय उन्होंने अपना पहला गीत रचा था वे केवल तीन वर्ष के थे। यह समय अप्पर से मिलने के लगभग पाँच वर्ष पूर्व का था और अप्पर की प्रथम रचना से लगभग तीन या चार वर्ष पहले का। इन दोनों संतों का जीवन भी ताने बाने में परस्पर रचा गया है। अपने जीवन काल में एक दूसरे से वे केवल तीन ही बार मिले और इस प्रकार से उनकी एक भेंट से दूसरी भेंट तक के समय के अनुसार हम अप्पर के जीवन काल को कई भागों में विभक्त कर सकते हैं।

हम कह सकते हैं कि अप्पर का कार्यकाल उनके जीवन के चालीसवें वर्ष से ही आरम्भ हुआ था किसी भी दशा में उससे पहले नहीं। अपने जीवनकाल के अंतिम चालीस वर्षों में वे भगवान शिव के लगभग १२५ आराधना स्थलों पर पैदल ही गये जो हजारों लाखों मीलों तक फैले हुए हैं। इसके अतिरिक्त तमिलनाडु के चार प्रख्यात संतों में केवल वे ही एक थे, जो तिरुक्कोकरनम के आराधना स्थल पर प्रभु को अपनी सेवा अपनी पूजा अर्पित करने गये थे। यह देव स्थान पश्चिमी सागर तट पर मंगलौर और मास गाओ के बीच में स्थित है। आज यह भाग उत्तरी कर्नाटक के हिस्से में आता है। किन्तु यह उस छोटे देवस्थल से अलग ही है जो पुदुकोट्टई की सीमा तट पर बसा है। अप्पर उससे भी आगे—हिमालय की तराई तक—गए थे क्योंकि वे उस कैलाश शिखर पर जाना चाहते थे, जहाँ भगवान शिव का निवास है किन्तु उन्हें भगवान् का आदेश प्राप्त हुआ कि वे वहाँ न जाकर दक्षिण भारत में तिरुवय्यार जाएं। इस दिशा में केवल तमिलनाडु की संत कवि काल अम्मय्यार उनसे आगे निकलीं, जो भगवान शिव के निवास स्थान कैलाश तक पहुंच गई थीं और जिन्हें स्वयं भगवान ने 'ओ माँ!' कहकर सम्बोधित किया था और इस प्रकार उन्हें एक अपूर्व गौरव प्रदान किया था। उन्हें भी आदेश हुआ था कि वे पुनः दक्षिण दिशा की ओर लौट जाएं और तिरुवालांकाड में जाकर बस जाएँ।

क्षप्पर ने कम-से कम तीन सौ बारह दशकों मे अपने गीता की रचना की थी जिसम कुल मिलाकर ३०६८ पद है। ये सभी पद भक्तिभाव स ओतप्रात और माधुय स भरपूर हैं। फिर भी इससे पहले कि व अपने तीन हजार स भी अधिक गीता के प्रथम पद की रचना करत, उन्ह अपन जीवनकाल का लगभग आधा भाग दु ख और कष्टा के बीच बिताना पडा था।

२

प्रारम्भिक काल

अप्पर का जन्म मुनैपाडी नामक ताल्लुक के तिरुवामूर गाँव म हुआ था। इस ताल्लुक को हम एक जिला भी कह सकते हैं क्योंकि यह वर्तमान तमिलनाडु के दक्षिणी अर्काट जिले के समान ही है। उनके माता पिता मादिनीयार पुगथनार वल्लालर जाति की ही उपजाति कुरुक्कियार के वंशज थ। वेल्लालर शब्द का सामान्य अर्थ होता है खेतिहर किन्तु तिरुवल्लुर ने अपने अध्याय धन की व्यासिता' मे इसका प्रयोग जिस अर्थ म किया है उसका एक विशेष महत्त्व है। उन्होंने नियम बनाया कि

वह समस्त धनराशि जिसे सुयोग्य व्यक्ति बहुत महनत द्वारा अर्जित करते हैं मानवता की सेवा म प्रयुक्त होने के लिए ही होती है।" तिरुक्कुरल—२१२

सवा शब्द का तमिल पर्याय है— वलान्मई'—अर्थात सेवा करना। अप्पर ने ठीक ही कहा है (इसम आश्चर्य की कोई बात नहीं)

कर्त्तव्य है मेरा सेवा करना
और
संतुष्ट रहना'

अप्पर की बडी बहिन तिलकवतीयार की सगाई किसी सेनापति स हुई थी किन्तु विवाह स पूर्व ही अप्पर के माता पिता दोनो बच्चो को अनाथ छोडकर स्वर्ग सिधार गये। उस समय तिलकवतीयार की आयु मुश्किल म चौदह वर्ष की रही होगी। इन बच्चो पर एक के बाद एक विपत्ति और दुःख के पहाड टूटने गये— लडाई के मैदान म तिलकवतीयार के भावी पति को भी वीर गति प्राप्त हो गयी। उसने घोषणा कर दी कि अब वह भी अपने जीवन का अन्त कर देगी—सम्भवत वह पारम्परिक रूप म अपने पति की चिता के साथ जलकर सती होना चाहती थी। अप्पर उस समय आठ दस वर्ष के बालक ही थे। वे रोते हुए अपनी बहिन के चरणो पर गिर पडे और कहने लगे अब मेरा क्या होगा? इस प्रकार उन्होंने अपनी बहिन के हृदय मे जीवित रहने का मन्त्र फूका। उनकी बहिन ने अपने छोटे भाई की देखभाल और पालन पोषण इतने प्यार और योग्यता से किया कि सभवत उनके माता पिता भी उनको इससे अधिक लाड प्यार न कर पाते और न ही उन्हें इससे अधिक योग्य बना पाते। बडे होकर उन्होंने अपनी जायदाद का, जो सभवत

काफी बढी थी भार सँभाला और एक योग्य व्यक्ति की भाँति तिरुवल्लुवर के बनाय हुए नियमो के अनुसार ही उन्होने अपने कर्तव्यो का पालन किया। तमिल-नाडु के सन्तो का चरित्र लिखनेवाले सेक्किपार ने उनके कार्यों का वर्णन इस प्रकार किया है

सामारिक जीवन की
क्षणभगुरता को पहचानकर
उन्हाने ल्टाये समस्त सद्भाव
मुक्त हस्त हो,
किये अनगों दान,
वित्ति दान!
हो उठे द्रवित जव
प्रेम मे,
महानुभूति मे
तो उ होन खुलवा दिए अनेक
भोजन के भण्डार
और जलागार
और
समार ने भी उन्हे दिया,
खूब दिया,
यश और मान सम्मान'

तिरुनावुक्कु अरसर पद—३५*

"जगल उन्होने लगवाए
तालाव भी खुदवाये
अपना कर्त्तव्य निवाहने को रहे
सदव तत्पर।
जिसने जव भी माँगी कोई मदद
खुश होकर उन्होने
उसे वह सव कुछ दे दिया,
जिसकी उसे जरूरत थी।
जो भी आया उनके द्वार
पाया उसने उनसे अकथ

*तिरु-नावुक्कुअरसर के लिए भविष्य में ति० प्रयुक्त किया जायगा।

आदर और सत्कार।
विद्वानों को उन्होंने दिया सम्मान
साथ ही अपनी उदारता का दान
दिया समस्त संसार को।

तिरु० पद—३६

उन्होंने नजरें घुमा कर चारों ओर देखा
और उन्हें यह बोध हुआ
कि संसार क्षणभंगुर है,
उन्होंने स्वयं से कहा,
'मैं इस क्षणभंगुर जीवन का शिकार कभी नहीं बनूंगा।'
उनमें एक अदम्य चाह थी
दर्शन को जानने की,
साथ ही पहचानने की,
कि देश के अन्य धर्मों के
क्या हैं विधि विधान।
और इस तरह वे आकर्षित हुए
जैन धर्म की ओर
जिसका प्रमुख सिद्धान्त है—'अहिंसा।'

तिरु० पद—३६

तत्काल ही अप्पर पाटलीपुत्रम गए, जहां जैन मठवासियों का निवास था और जो समुद्रतट पर बसा हुआ था। वर्तमान समय में यह स्थान सम्भवतः तिरुप्पादिरीपुलियूर के पास ही है जो मद्रास में तंजाबुर की रेलवे लाइन पर कडलूर जंक्शन से तीन किलोमीटर उत्तर में बसा है। फिर वे जैन मठ में सम्मिलित हो गये।

अप्पर के जाने के बाद तिलकवतीयार ने भी गांव छोड़ दिया और उन्होंने तिरुवादिकई वीरट्टानम के शिव मंदिर में शरण ले ली। अब वह दिन रात भगवान् की सेवा में ही अपना समय बिताने लगीं।

३

अप्पर और जैन धर्म

अप्पर के जैन धर्म के प्रति आकर्षण एवं उपगमन को शेक्किषार ने एक विशेष प्रकार से व्यक्त किया है। उन्होंने कहा है। 'हमारे प्रभु ने (अप्पर पर) कृपा नहीं की।' शेक्किषार द्वारा रचित जैन चरित गाथा में अप्पर को विधर्मी कहा गया है क्योंकि वे जैन धर्म का अध्ययन करने जैन मठ में चले गये थे किन्तु जब उन्होंने दोबारा शैव धर्म को अपनाया तो शेक्किषार ने कहा कि वे एक दुःखी और पश्चात्ताप की अग्नि में जलते हुए व्यक्ति थे।

अप्पर किस उम्र में जैन धर्म के प्रति आकर्षित हुए यह ठीक से कहा नहीं जा सकता किन्तु अनुमान किया जाता है कि जब उन्होंने जैन धर्म को अपनाया उस समय उनकी आयु बीस वर्ष से कम नहीं थी। सम्भवतः उस समय उनकी आयु पच्चीस वर्ष के आस पास रही होगी। उन्होंने अनेक वर्षों तक जैन धर्म का पालन किया। वे उस समय एक जैन साधु की तरह अपने सिर के सारे बाल नोचते रहे जब तक कि पूर्ण रूप से गंजे नहीं हो गये। किसी भी रूप में यह एक बहुत दुःखदायी अनुभव है। कहा जाता है कि जैन धर्म शासकों के बीच वे बहुत महत्त्वपूर्ण पद तक जा पहुँचे थे और उन्हें धर्म सेनानी (धर्म सेनार) की पदवी प्रदान की गई थी। उनके साथी सम्भागी तथा उस समय के पल्लव शासक नरसिंह्म वर्मा के पिता महेन्द्रपल्लव ने ६०० ई० से लेकर ६३० ई० तक शासन किया। अप्पर ने इन दोनों ही शासकों के शासन काल को देखा था। जिस समय अप्पर जैनियों के मध्य में जैन धर्म के चरम शिखर पर थे, उन्हें अचानक इतना भयंकर उदर शूल हुआ कि जैन मठ तथा राज्य के अच्छे से-अच्छे चिकित्सक और तांत्रिक भी उसे ठीक न कर सके और हार गये। मैं जान बूझकर उन सभी को तांत्रिक नाम से सम्बोधित कर रहा हूँ क्योंकि वे दवाइयाँ भी देते थे मंत्र भी पढ़ते थे और जादू टोना भी करते थे। जब जब वे मंत्र पढ़ते थे उदरशूल बढ़ता जाता था। उदर शूल से पीड़ित दुःखी अप्पर को अपनी बहन की याद आयी और उन्होंने उसे चुपचाप बुलवा लिया। तिलकवतीयार अप्पर की प्रभुता और [illegible] दुःखी थी, क्योंकि उन्हें यह विश्वास था कि अप्पर [illegible] पाखंडी हो गये हैं। उन्होंने उनके पास जाने से [illegible] बल्कि यह भी कहला भेजा कि अप्पर स्वयं [illegible]। [illegible] यही हुआ। आधी रात के समय सिर पर [illegible]

बहन के पास जा पहुँचे। उस अंधेरी रात म उनके कदम लड़खड़ा रहे थे और उन्ह कोई राह दिखानेवाला न था। किसी प्रकार खेता खलिहाना गड्ढा, नाला का पार करत हुए अन्त म भोर होत होते वे बहन के द्वार पर जा खड़े हुए। व बहन के चरणा म गिर पड़े और उन्हें अपन दुख की गाथा सुनान लग।

तिलकवतीयार न प्यार स अपन पाँवा पर झुक भाई को ऊपर उठाया अपन हाथ मे पवित्र भस्म उनक मस्तक पर लगायी और धीर धीर उनका हाथ पकडकर भगवान शिव क मन्दिर मे ल गयी। यह मन्दिर तिरुवाडिकै वीरत्तानम म है।

४

अप्पर का व्यवहार

आश्चर्य की बात है कि अप्पर के जैनधर्म अपनाने और उनके अपनी बहन के पास दुखी होकर लौटने के विषय में सेक्किषार ने इन वाक्यों का प्रयोग किया था 'हमारे प्रभु ने (उन पर) कृपा नहीं की' और 'अब भगवान की दया उन्हें दुबारा प्राप्त हुई है' क्योंकि सेक्किषार को मानिक्कवाचकर की दो भविष्यवाणियों के विषय में अवश्य मालूम रहा होगा। मानिक्कवाचकर ने कहा था

> उस (प्रभु) के चरण पवित्र हैं जो निमिष मात्र के लिए भी मेरे मन से दूर नहीं होते हैं और 'प्रभु! मुझसे और मेरे मन से दूर होने की आपकी जो भर भी इच्छा नहीं है।'

'भगवान कभी मनुष्य को धोखा नहीं देते यह तो केवल हठी मनुष्य ही है, जो भगवान से दूर चला जाता है। इस सन्दर्भ में मानिक्कवाचकर ने यह स्वीकार किया है कि जब प्रभु ने उनकी रक्षा करने के लिए उनकी ओर अपने पवित्र हाथ बढ़ाये थे स्वयं वही उनके हाथ को झटककर उनसे दूर हो गये थे और सम्भवतः उन्होंने प्रभु की हँसी भी उड़ायी थी। हमें मानिक्कवाचकर के इन सभी कथनों को याद रखना चाहिए। जब अप्पर को उनकी बहन प्रभु के सम्मुख एक अपराधी की भाँति ले गयी थी अप्पर ने न केवल स्वयं को निर्दोष बताया था, उन्होंने यही सब कहा था कि उनको एक झूठे मुकदमे में फँसा दिया गया है। उनके एक गीत में उनका भोलापन और उदरशूल की भयंकर पीड़ा झलकती है

यह यातनादायी उदरशूल
जो मृत्यु की वेदना से भी अधिक
भयंकर है,
क्यों दूर नहीं करते ?
मुझे नहीं मालूम
कि मेरा दोष क्या है
हे प्रभु!
इस दुख को दूर करो!
सदा और सर्वदा,
दिन और रात
बराबर, लगातार,

मेन तुम्हारे चरणो की पूजा की है।
अव तक इस रोग का निदान नही हुआ
इस उदरशूल ने
मेरी आंतो को छेद डाला है
मैं भयकर
पीडा मे दुहरा हो हो जाता हूँ
प्रभु ! मैं तुम्हारा दास
अब और नही
सह सकता

हे मेरे
केदिलम के किनारे
आदिकुलई के वीरात्तनम मे
वसनेवाले प्रभु !
अब और नही सहा जाता।

तिरुमुरै* ग्रन्थ ४ दशक १ पद १

यह उनके प्रथम दर्शन का पहला पद है। अगले पदो म उन्होने घोषणा की

मैं अपने हृदय को
तुम्हारा निवास स्थान बनाया है।

मुझे उस एक पल का
भी स्मरण नही
जब मेरा मन
तुमसे तुम्हारे ध्यान से
दूर रहा हो।

तुम्हारी ऐसी निष्ठुरता
तो कभी देखी ही नही थी !
यहाँ मैं जी रहा हूँ
केवल एक ही आस के सहारे
कि मैं दास बनू,
केवल तुम्हारा।
किन्तु यह उदरशूल

*तिरुमुरै के लिए आगे ति० मु० का प्रयोग किया जायेगा।

मुझे जीवित रहते ही दे रहा है मरणातुल्य कष्ट प्रभु !
दया करो मुझ पर,
और इससे मुक्ति दो।

मैं,
युगों से तुम्हारा भक्त हूँ
किंतु,
इस बात से अनजान
तुम रुष्ट हो मुझसे
और इस मरणांतक पीड़ा का
भागी बना रहे हो।
तालाब के किनारे खड़े
उन चौकीदारों से असावधान।
जिन्होंने मुझसे कहा,
प्रेरित किया—
'इस तालाब में कूद पड़ो,
तैरो और
इसकी गहराई का अनुमान करो'—
मैं कूद पड़ा हूँ इस जलाशय में।
और अब मुझे वह
किनारा
दिखायी नहीं देता
जहाँ मेरे पैर टिक सकें।

ऐसे शब्द
मैंने पहले कभी नहीं सुने थे।
मुझे याद नहीं कि
कब मैं भूल गया था
जल, फूल और धूप से
तुम्हारी पूजा-अर्चना करना

मुझे ऐसे किसी अवसर की
याद नहीं
जब मैंने तमिल में
तुम्हारे लिए मधुर गीत नहीं गाये।"

अच्छे और बुरे
दिनों में
मुझे याद नहीं कि
कभी मैं तुम्हें भुला बैठा होऊँ।

अपनी जुबान से
कब मैंने तुम्हारा नाम नहीं लिया,
मुझे याद नहीं।

इस प्रकार इन शब्दों के माध्यम से भगवान के उस सर्वोच्च न्यायालय में जो दया का सर्वोत्तम स्रोत है उन्होंने स्वयं को निर्दोष सिद्ध करने का प्रयास किया। इससे हम क्या समझ सकते हैं? अपने हृदय को बार बार टटोलने पर, और इस समस्या पर बार बार विचार करने पर मैं इसी निश्चय पर पहुंचा हूँ कि पिछली तेरह शताब्दियों से तमिलनाडु में अप्पर के विषय में जो यह कहा जाता रहा है वे विधर्मी थे—यह एक निराधार आक्षेप है, झूठा दोष है।

इस सन्दर्भ में मुझे बपतिस्मा (नामकरण) करने वाले जान और कुमारिल भट्ट का ध्यान आता है। जिस प्रकार जान प्रभु जीसस के अग्रवर्ती थे ठीक उसी प्रकार अप्पर तिरु ज्ञान सम्बन्धर के अग्रवर्ती थे। मेरे विचार में अप्पर भी उसी तरह जैन धर्म में प्रविष्ट हुए थे, जैसे कुमारिल भट्ट बौद्ध आश्रम में गये थे। दोनों का लक्ष्य एक ही था उस धर्म विशेष के रहस्यों का अध्ययन करना। अप्पर जैन धर्म के पक्के अनुयायी कभी नहीं बने। वह शैव धर्म के विरोधी भी नहीं थे। उन्होंने जैन धर्म को कुछ इस प्रकार अपनाया था जिस प्रकार आज के युग में कोई गुप्तचर शत्रु के सर्वोच्च सैनिक शिविरों में घुसपैठ कर लेता है। सक्किजार के अनुसार उदरशूल उनके लिए शैवधर्म का विरोध करने का एक दण्ड था किन्तु मेरे विचार में यह केवल गुरु और उनके द्वारा दी गई शिक्षा के साथ विश्वासघात करने का फल था। वे जैन गुरु थे इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। यह एक कठोर नियम है। कुमारिल भट्ट के जीवन की एक घटना में इस नियम की सार्थकता सिद्ध होती है। वह गले तक भूसे के ढेर में जा छिपे थे और तब उस ढेर में नीचे से अग्नि प्रज्वलित कर दी गयी थी। जैसे जैसे अग्नि और लपटें ऊपर की ओर उठने लगीं कुमारिल भट्ट ने अपने शिष्यों को बताया कि उन्होंने बौद्ध धर्म से क्या शिक्षा ग्रहण की थी और किन कारणों से आदि शंकराचार्य बौद्ध धर्म के खिलाफ धर्मयुद्ध करने में सफल हुए थे। अप्पर को उदरशूल के रूप में दण्ड मिला था, क्योंकि उन्होंने अपने गुरु के साथ विश्वासघात किया था भले ही उनके गुरु जैन थे।

जब तक हम उनके उस भयंकर उदरशूल के विषय में यह धारणा लेकर नहीं चलेंगे उनका पहला ही गीत जो उन्होंने केदिलम नदी के तट पर आदिकई वीरा स्तनम में भगवान शिव के मन्दिर में गाया था, आडम्बर के साथ साथ झूठी गवाही

का सबसे बड़ा उदाहरण साबित होगा।

इसके अतिरिक्त यदि उनमें भगवान शिव के प्रति असीम आस्था न होती, तो वे बार बार पल्लव राजाओं द्वारा बुलाने के लिए भेजे गए दूतों का विरोध न कर पाते यह तो केवल एक खोखली गीदड़ भभकी ही होती क्योंकि उन्होंने राजदूतों से कहा था

"हम किसी के अधीन नहीं,
हम भय नहीं मृत्यु का,
नरक में यन्त्रणा हम नहीं भोगेंगे,
डरते भी नहीं हम !
प्रसन्न रहेंगे हम,
रोगों का हमसे नहीं है परिचय,
झुकते नहीं हम
परम आनन्द ही हमारा धन है,
दुख तो यहीं नहीं हैं, हमारे लिए।
हम अनुद्धरणीय दास बने—
उस विशिष्ट शंकर के
जो नहीं है, किसी के भी अधीन
हम वो सेवक
केवल उस राजा के
जिसके कानों में हैं असली
शंखों की एक लड़ी
हम उनके गुलाब जैसे चरणद्वय
की शरण में आ पहुँचे हैं
जिन्हें देखकर
लगता है कि
उन्हें अभी-अभी तोड़ा गया है
डाल से। तिo मुo, ग्रन्थ ८, दo ९८ पद ?

इसके अतिरिक्त अप्पर ने भगवान शिव के दरबार में अपने को निर्दोष ठहराने के लिए जो पहला ही गीत गया था, उसे सुनकर उन्होंने अप्पर को 'नावुक्करसर' —की उपाधि प्रदान की थी। यह बात एकदम निराधार सिद्ध हो जाती है यदि अप्पर को निर्दोष न समझा जाय। उन्हें क्षमादान करना समझ में आता है किन्तु उस सर्वोच्च न्यायाधीश द्वारा ऐसे अपराधी को जिसपर फौजदारी का सबसे बड़ा आरोप लगा हो पदवी प्रदान करना समझ से दूर की बात है।

इसका शीघ्र ही प्रतिकार हुआ। और सभी नियमों के अनुसार यही प्रतिकार था कि विश्वासघातियों को भयंकर यातनाएँ सहनी पड़ें।

५

प्रायश्चित्त

पल्लव महाराज के मंत्रियों ने अप्पर को गिरफ्तार कर लिया और राजा के सामने ला खड़ा किया। यह राजा सम्भवतः नरसिंह्म वर्मा प्रथम थे। राजा ने जैन धर्म के बड़े बड़े पुजारियों से सलाह ली। उन्होंने कहा कि अप्पर को चूने के पत्थरों में दबा कर उस ढेर में आग लगा देनी चाहिए। और ऐसा ही किया गया। जलते हुए चूने के पत्थरों के ढेर में बैठे अप्पर भगवान शिव के ध्यान में मग्न हो गये और गाने लगे।

वीणा के दोषरहित संगीत
और दमकते हुए चन्द्र के समान,
दक्षिण दिशा में आती हुई मन्द बयार के समान
ग्रीष्म ऋतु में आते हुए झोंकों के समान,
जलाशय के चारों ओर
मधुमक्खियों की गुनगुन के समान,
मेरे परमपिता का सुन्दर आश्रम है
और हैं
अनादि भगवान के दो चरण कमल।

ति० मु० ग्रन्थ ४, दशक १ पद १

सात दिन बाद जब कोठरी खोली गयी तो पाया गया कि अप्पर सही-सलामत थे। जब राजा के धार्मिक सलाहकारों ने अप्पर को चूने के ढेर पर से इस प्रकार उठते देखा जैसे वे अभी स्नान करके आये हों तो वे आश्चर्यचकित रह गये। यही दशा राजा की हुई। उसने अपने मन्त्रियों से पूछा कि 'अब क्या किया जाय?' उन्होंने कहा कि अप्पर को विष दे देना चाहिए। और ऐसा ही किया गया। तब अप्पर ने यह कहते हुए कि यह विष भी भगवान के भक्तों के लिए अमृत हो जायगा विषपान कर लिया। ठीक ऐसा ही हुआ। जब सुरों और असुरों ने मिल कर अमृत पान के लिए क्षीरसागर का मंथन किया था और उसमें से अमृत के स्थान पर विष निकला था तो क्या स्वयं भगवान शिव ने हाथ बढ़ाकर वह विष नहीं पिया था? इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि भगवान के सच्चे भक्तों के लिए विष अमृत में बदल जाता है।

जब अप्पर को उस विषपान के बाद भी कुछ नहीं हुआ, तो राजा और उसके सलाहकार दंग रह गए।

एक बार फिर राजा ने उनसे सलाह माँगी। इस बार उन्होंने कहा कि अप्पर को पागल हाथी के पैरों तले कुचलवा देना चाहिए। यही किया गया। अप्पर गाने लगे

भभूत जैसी श्वेत भस्म और चन्दन सजा है
जिसके माथे पर, सुशोभित है
शुभ्र चन्द्र
जिसके शीश पर
वही छिपने के लिए एक अनमोल वस्त्र है,
और उनकी देह है
एक शाश्वत मूगा।
धवल, वह प्रसिद्ध उग्र वृषभ—
जिनका वाहन है
सर्प जिसके चौड़े सीने पर ऐसे पड़े हैं
जैसे गल-माल,
उसी की है कलकल करती केदिलम नामक सरिता।
वही अद्वितीय पुरुष है हमारा संरक्षक
कुछ नहीं है ऐसा, जिसका भय हो हमें
डिगा नहीं सकती कोई भी
भयानक वस्तु अब हमें।

ति० मु०, ग्रन्थ ४, दशक २, पद १

पागल हाथी ने अप्पर के चरणों में बैठकर उन्हें प्रणाम किया और फिर अपनी सूँड उठाकर राजा, उसके सलाहकारों तथा वहाँ पर एकत्र सन्यासियों की ओर घूमा, तो वहाँ भगदड़ मच गयी।

अप्पर को मारने के प्रयत्नों में असफल होने पर, इस डर से कि अब यदि उन्होंने अप्पर का नाश नहीं किया, तो उन पर संकट का पहाड़ टूट पड़ेगा, उन्होंने राजा से एक बार फिर निराश होकर कहा कि अब तो अंतिम उपाय यही है कि अप्पर को एक पत्थर से बाँध कर समुद्र में फेंक देना चाहिए। और फिर ऐसा ही किया गया।

अपने उद्दाम साहस से अविचलित, भगवान शिव की आस्था में अडिग अप्पर इस बार 'नमः शिवाय' इस रहस्यमय पंचाक्षर मन्त्र का जाप करने लगे। आनंदित होकर वे गा उठे

ओम !
यह एक शब्द
ओम
जो हर विपत्ति मे सहायक है हमारा
जो हर वेदो का रचयिता
और जो तेज पुज है,
स्वर्ग मे रहनेवाले देवताओ का
यदि तुम
उनके उन पावन चरणो की करबद्ध पूजा करोगे
तो वह विश्व के कोलाहल और अशाति से छुटकारा दिला सकते हैं
अगर गले मे पत्थर बाधकर भी
तुम्हे कोई समुद्र मे फेंक देगा
उस समय भी
सर्वोत्तम सहायक होगा वही एक
ओम नम शिवाय।

तिरु० ग्र० ४, दशक ११ पद १

और वास्तव म यही देवी और रहस्यमय पचाक्षर एसा सगीतमय आवेजक (प्रेरक) बन गया जिसने पत्थर को उसका बाह्यस्वरूप बदले बिना ही इतना हलका फुलका बना दिया जसे वह काठ का स्तम्भ हो और उस शिला से बधे हुए अप्पर समुद्र की सतह पर उतरा जाय और लहरो ने जसे उन्हे झूला झुलाते हुए समीप वर्ती तिरुप्पादिरिपुलियूर के किनारे पर ला पहुचाया।

उस गाव के निवासी प्रसन्न होकर वहा भागे भागे आये। वे हर हर चिल्ला रहे थे और एसा लग रहा था जैसे उनकी आवाज ने स्वर्ग को भेद दिया हो और वह डगमगा उठा हो। अप्पर उनके साथ शिव मदिर मे गये और भगवान की प्रतिमा के सामने विभोर होकर गाने लगे

मेरे प्रभु
मेरे, और उन सभी के
जिन्होंने मेरे साथ-साथ कही जन्म लिया,
माता—पिता,
सर्वस्व बन गये।
उन्होंने प्रसन्न हो
तीनो लोक बनाये,
और वे ही,
जो दिव्य आत्माओ के सहायक है,

मेरे अन्तर में सुप्रतिष्ठित हो गये
तिरुप्पादिरिपुलियूर में भी वे हम सबके,
जो उनके दास है,
अप्रत्यक्ष रूप में सहायक बन गये हैं।

तिमु० प्र० ४, दशक ६८, पद १

तिरुप्पादिरिपुलियूर से अप्पर तिरुवादिकई वीरत्तानम चले गये। मंदिर में प्रवेश करके वे अपने उसी आराध्य के सामने खड़े हो गये जिसके सामने कुछ दिन पहले ही उन्होंने अपने निर्दोष होने की याचना की थी।

शिव भक्तों का वर्णन सेक्किपार ने अपने गीत में इस प्रकार किया है—

उनके गले में है
रुद्राक्ष की माला
और शरीर पर कन्दै,
उनका काम है
केवल प्रभु की सेवा करना,
है दया-भाव जिनके हृदय में और प्रेम,
जो सर्वगुण सम्पन्न है,
उनकी दृढ़ता का वर्णन
मैं किस प्रकार करूँ?

'कन्दै' एक प्रकार का अधोवस्त्र होता है, जिसे कमर के गिर्द लपेटा जाता है और जिसके नीचे की बखिया पिंडलियों के निचले भाग तक पहुँचती है। यह कपड़ा हमेशा श्वेत होता है। इन सभी तिरसठ तमिल संतों ने जिनका जीवन चरित्र सेक्किपार ने लिखा है कभी गेरुआ वस्त्र नहीं पहना। सेक्किपार ने अप्पर का, जब वे आदिकई-वीरत्तानम् में भगवान शिव के सम्मुख खड़े थे बड़ा सुन्दर वर्णन किया है। इस वर्णन में हमें केवल एक बात और बढ़ानी है। अप्पर उस समय अपने हाथ में एक कुदाली लिए हुए थे, जिसकी बेंट खूब लम्बी थी। उन्होंने इस कुदाली को इस प्रकार पकड़ रखा था, जिस प्रकार कोई सैनिक अपने कंधे पर बंदूक रखता है। जहाँ जहाँ वे जाते भगवान शिव के मंदिर के आस पास और रास्ते में जितने काँटे और झाड़ियाँ होतीं, उन्हें इसी कुदाली से काटते जाते।

भगवान शिव के सामने खड़े होकर उन्होंने इस गीत के माध्यम से अपना ध्येय व्यक्त किया

वह प्रभु
जिसके गले में
सुगन्धित कुविला के
फूलों का हार है,

वह प्रभु
जो वीरत्तानम् के स्वामी हैं
वह प्रभु, जिसके पास श्वेत नन्दी है,
वह प्रभु, जो चितकबरे सर्पों से
सुशोभित है,
वह प्रभु, जिसकी आराधना
स्वयं भगवान विष्णु करते हैं—
वही भगवान विष्णु, जो गरुड पर आरूढ होते हैं
और जिनको स्वयं ब्रह्मा भी
भली-भांति नहीं जानते,
वही प्रभु, जो आदिवई में हैं
और किल्लोल करती, केदिलम नदी के तट पर है—
ओह ! मैं कितना मूर्ख हूँ,
कि मैंने अतीत में
उसी प्रभु के विषय में
असम्मानसूचक शब्द कहे थे।

तिमु० प्र० ६, दशक ३, पद २

इस प्रकार उन्होंने अपने आराध्य से विनती की, क्योंकि स्वप्न में भी भगवान का अपमान करना उचित नहीं है। और अप्पर ने यह गुनाह उस समय किया था, जब वे पल्लव महाराज के दरबार में जैन संन्यासी थे।

इस गीत के साथ अप्पर के जीवन का एक लम्बा इतिहास आरम्भ होता है—वह इतिहास जो चार दशकों से कम का नहीं था, और जिसमें से कुछ समय उन्होंने शिव भगवान सम्बन्धर के साथ बिताया था।

६

अप्पर के भगवान

शव सिद्धान्त के अनुसार वेदो म सामान्य और आगम म विशेष गुण ह। यद्यपि वेदा को पूरा आदर सम्मान दिया गया है फिर भी आगम ही शव सिद्धान्त के समस्त दशन के स्रोत ह। शिव ज्ञान बोधम ही जिस पर शैव सिद्धान्त आधारित है, आगम का सार है। मानिक्कवाचकर के अनुसार इसकी रचना भगवान शिव न स्वय महेन्द्र पर्वत पर आसीन होकर की थी और तदुपरान्त उसे अपनी सहधर्मिणी भगवती उमा को सुनाया था। शिव ज्ञानबोधम के बारहवें और अतिम सूत्र म लिखा है

> '(ज्ञान की सहायता से) उस (अज्ञान) मल को धो डाला जो तुम्ह भगवान शिव के कोमल और दृढ चरण-कमलो से एकाकार होने से रोकता है उन भक्तो म मिश्रता करो जो सासारिक इन्द्रजाल से दूर है और जो ज्ञान परिपूर्ण हैं, तथा उन मदिरा की भी पूजा करो जहा वास्तव म भगवान का वास है।'

शव सिद्धान्त के अनुसार भगवान शिव स्वय एक मदिर है और उस प्रतिमा की पूजा आराधना, जो मन्दिर मे स्थापित है, धम का एक अभिन्न अग है। यही कारण है कि तमिलनाडु म हजारो मदिर ह। किसी किसी एक शहर म सौ स भी अधिक मन्दिर है।

वेदो को माननवाल तथा ईश्वर के निराकार स्वरूप की उपासना करन वाला के लिए मदिर म पूजा आवश्यक नही है। वेदा के कमकाण्डा म जो त्रय (तीन) अग्नि मन्त्र और पूजा, तथा सामूहिक यज्ञ (हवन) उनके दैनिक जीवन क लिए प्रस्तावित है पर्याप्त है और उन्ह किसी भी मदिर म जाने की आवश्यकता नही है।

अखण्ड शैव सद्धान्तिक होन के नाते अप्पर ने कम स कम भगवान शिव के सवा सा मदिरा म जाकर उनकी पूजा आराधना की और उनके भजन गाय। फिर भी यह नहा कहा जा सकता कि उनके भगवान साकार थ, और मदिर म उनकी स्थापना थी। विलियम लान जो इगलैण्ड म रहत थ और रहस्यवादी थ कहा है

> यद्यपि भगवान सब जगह है फिर भी वह तुम्हारी आत्मा की गहन तम गहराइयो म छिपा है। स्वाभाविक चेतना के माध्यम स भगवान का

नही पाया जा सकता है और न तुम उससे एकाकार ही हो सकते हो। नही ज्ञान की आन्तरिक शक्ति, इच्छा तथा स्मरण के माध्यम से ही भगवान तक पहुँचा जा सकता है किन्तु तुम्हारा हृदय उनका निवास स्थान नही बन सकता। तुम्हारी कोई तो एक गहरी जड है जहा से ये सभी आन्तरिक शक्तिया उसी प्रकार प्रस्फुटित होती है जिस प्रकार एक बिन्दु से अनेक रेखाएँ अथवा एक वृक्ष से अनेक डालें निकलती हैं। इसी गहराई को केन्द्र सचय या आत्मा का तल कहते है। इसी गहराई तुम्हारी आत्मा का मिलन अथवा चिन्तन या अनतता कहते हैं, क्योकि यह इतना विराट है कि यह केवल भगवान की अनतता से ही सन्तुष्ट हो सकता है।

यही आतरिक भगवान ही अप्पर के भगवान है। वे कहते है

मेरे मस्तिष्क के अन्तर्भाग मे 'वह' है
मेरे मस्तक पर (अपने चरण रखे) 'वह' है
वाणी मे 'वह' है और भक्तो के हृदय मे
जो अपने अधरो से
केवल उसके चरणो का ही गुणगान करते है
'वह' है,
'वह' देवात्माओ से भी ऊँचा है,
सप्त मण्डलो के परे भी 'वह' है
फिर भी (ससार के)
मौन मे मण्डित पर्वतीय धर्मो मे, 'वह' है
कोन्द्रै पुष्प की सुगन्ध मे 'वह' है
वह पर्वतो मे है वह' अग्नि मे है
वायु मे 'वह है,
और आदना के आचल मे 'वह' है
कैलाश के शिखर पर 'वह' है
'वह जो कानाति (कानहस्ती) मे है
वही' सर्वदा मेरे अन्तर मे वास करता है।

तिमु० प्र० ६ दशक ८ पद ५

अप्पर के लिए भगवान ही उनका सर्वस्व थे। उन्होने लिखा है

तुम्ही हो माता, पिता तुम्ही हो,
तुम्ही हमारे स्वामी हो
तुम्ही हो स्नेहिल मामा,

और चाची भी तुम्ही हो
तुम्हीं योग्य पत्नी भी हो,
कातिमय धन भी तुम्ही हो
मेरे सभी साथी,
मरा 'घर' भी तुम्ही हो !
व सब जिनसे मैं, सुन पाता हूँ,
सवारो जिन पर में चढता हूँ, तुम्ही बनाने हो,
और मेर अ तरग सहायक बनकर
तुम मुझ
यही सब कुछ छोडने को
वाध्य भी करते हो।
यह स्वण तुम्ही हो,
यह अनमोल हीरा, यह मोती,
मेरे प्रभु सब कुछ तुम्ही हो।
हा प्रभु,
न दोवाहव मेरे प्रभु सब कुछ तुम्ही हो।

तिमु० ग्र० ६, दशक ९५, पद १

साधारणतया प्रत्यक हि दू के लिए ज म एक अभिशाप होता है और इससे छुटकारा पाना ही चाहिए। फिर भी अप्पर मानव ज म को साथक मानत थे। उ होने लिखा ह

कमान के समान भवे,
गुलाव के समान
अधरो पर
खिलती हुई मुसकान
गगा द्वारा शीतल की हुई रूखी अलके,
मूगे की तरह लाल देह पर
दूध के समान श्वेत भस्म,
और प्रभु के उठे हुए मधुर चरण,
यदि कोई एक बार भी इनके दशन कर सके,
तो इस ससार मे मानव जीवन पाना
होगा साथक।

तिमु० ग्रन्थ ४, दशक ८, पद ४

अप्पर अपने शरीर के प्रत्येक अग से भगवान की आराधना और पूजा करना चाहते हैं। वह कहत हैं

ओ मेरे मस्तक !
उस (विश्व के) स्वामी के सामने
झुक जा,
जो मुण्डमाला पहन कर एक-एक मुण्ड मे,
दान स्वीकारते है।
ओ मेरे मस्तक उसके सामने झुक जा।

ओ मेरे नेत्रो !
उसकी ओर देखो,
जिसने,
समुद्र मन्थन से निकला हुआ विषपान किया था
वह प्रभु नटराज
जो सदैव लय-ताल मे अपनी भुजाओ को
हिलाते हुए—नृत्य करता है
मेरे नेत्रो !
उसकी ओर देखो।

ओ मेरे कर्ण ! सदा
भगवान शिव की वीरता के गुणगान सुनो।
वह हमारा
राजा है
उसकी देह मे मूगे के समान लाल
लपलपाती लपटो की छवि है,
मेरे कर्ण। सुनो !

मेरी नासिका।
उस श्मशान भूमि की सुगन्ध को
मेरी सासो मे भर दो
जहा तीन नेत्रोवाले उमापति वसते है
जो उनके बोलो के सहारे जीती है
मेरी नासिका !
उसकी सुगन्ध को मेरी सासो मे भर दो।

ओ मेरी वाणी ! देखो,
तुम उस प्रभु का ही गुणगान करना

जो मदमस्त गजराज की, खाल पहनकर
उस श्मशान भूमि मे,
जहाँ प्रेतो का वास है, नृत्य करते है,
मेरी वाणी ! देखो, तुम केवल उसका ही
गुणगान करना।

ओ मेरे मन !
तुम उस निर्मल प्रभु का ध्यान करो
जिनकी घुंघराली सुनहरी अलकें है
जो बादलो से घिरे
पर्वत-प्रदेश मे रहते है
और जो उमापति ह।
मेरे मन ! तुम उस प्रभु का ध्यान करो !

ओ मेरे हस्तद्वय !
आपस मे मिल जाओ
और उस श्रेष्ठ प्रभु की पूजा करो
जिनकी कमर मे जहरीले सर्प लिपटे है,
उनके चरणो मे बिखेर दो सुगंधित फूलो के ढेर
ओ मेरे हस्तद्वय ! आपस मे जुड जाओ
और उसकी पूजा करो।

यह शरीर, यह देह
मेरे किस काम की है, जो सच्चे भक्त की तरह
प्रभु के मन्दिर की परिक्रमा भी नही करती
और अपने हाथो से
प्रभु के चरणो मे पुष्प भी नही चढाती
और प्रभु को प्रणाम भी नही करती ?
तो फिर इस देह का क्या लाभ है ?

तिमु० ग्र० ४, द० ९, पद १ से ८ तक

७

अप्पर का ध्येय

छठी शताब्दी म पल्लव राजाओं क सहयोग स जो स्वय जन धम के कट्टर अनुयायी हो गये थे जैन धम खूब फूला फला। जन धम प्रमुख सिद्धा त 'अहिंसा' अथात किसी भी जीव को तनिक भी नुकसान न पहुँचाना है लेकिन इसके अनु यायियों न बलपूवक लागों म धम परिवतन कराया और शव मंदिरों तक को तोड डाला। तिरुनान सम्ब धर न जो धमयुद्ध आरम्भ किया था उसका कारण न तो जन धम क प्रति और न सच्च अर्थों म जनवाद क प्रति घणा था। यह धमयुद्ध तो जन मठाधीशों क हिंसक व्यवहार तथा प्रतिमाओं को ढहाने क विरुद्ध था।

तिरु ज्ञान सम्ब धर क पिता देश म फले इस अनाचार के कारण बहुत दुखी थे। उन्होंने भगवान से याचना की थी कि उन्ह एक ऐसा पुत्र प्राप्त हो जो सनातन धम के प्रति किय जानवाले इस अन्याय को समाप्त कर उसे पुन प्रतिष्ठित कर सके। और भगवान न उसकी प्रायना सुनकर हृदयाधार को ऐसा पुत्र रत्न दिया भी। इस बालक न अपन जीवन के तीसरे वष म ही अपना धम कम आरम्भ कर दिया। अपनी आयु के तीसरे वष म जो पहला गीत इस बालक ने गाया, वह था

मूख जन और बौद्ध
जो प्रभु के बारे मे
अपयश फैला रहे है
और उनके लिए सवथा अनुचित
भाषा का प्रयोग कर रहे है
इसलिए, मेरे मन का चोर
इस ससार म एक पागल हाथी की तरह
अवतरित हो गया है।
यह कसा रहस्य है ?
मुझे लगता है यह 'वही' प्रभु पागल है,
जो ब्रह्मपुरम् म आकर बस गया है।

तिमु० प० १, द० १, पद

जसा कि पहले कहा जा चुका है अप्पर तिरु नान सम्ब धर क पूववर्ती कर आय। अत अप्पर का उद्देश्य था प्राय सभी अथवा कम स कम उ

मन्दिरों में जायें, जो कावेरी नदी के उत्तरी और दक्षिणी किनारों पर बने थे। वे तमिलनाडु के दूसरे हिस्सों में बने मंदिरों में भी जाना चाहते थे, जिससे वे लोगों को तिरुज्ञान सम्बन्धर की अगुवानी के लिए तैयार कर सकें। जब तिरुज्ञान-सम्बन्धर किसी स्थान पर लोगों से मिलकर आगे बढ़ जाते थे, तो अप्पर वहाँ इस अभिप्राय से जाते थे कि वे उनके धर्मयुद्ध की स्थिति को और अधिक दृढ़ बना सकें।

अप्पर के विरुद्ध जैनधर्म वालों ने राजा के अपने सहयोग से सर्वाधिक कठोर अभियान चलाया था। अतः यह और भी अधिक विलक्षण बात है कि अप्पर के अधिकांश गीतों में जैनियों के विरुद्ध शायद ही कहीं निन्दा की झलक मिलती हो, और यदि ऐसा है भी तो उसकी भाषा बहुत परिमार्जित है। अप्पर ने केवल दो स्थानों पर साथ साथ अपने विरुद्ध उस अभियोग का वर्णन किया है जब उन्हें चट्टान से बाँधकर समुद्र में फेंक दिया गया था। यहाँ भी जो संकेत है, वह उस कष्ट का नहीं है जो उन्हें सहना पड़ा था वरन् इन पदों में भी प्रभु की दया का ही वर्णन है। इनमें एक पद पहले ही उद्धृत किया जा चुका है। निम्नलिखित गीत में हमें दूसरा संकेत मिलता है:

जब जैनियों ने मुझे
जल्दी जल्दी
चट्टान से बाँधकर
फेंक दिया था समुद्र में,
मेरे अधरों ने उस समय भी
नीलक्कुडिवासी प्रभु का ही नाम लिया था,
हरे भरे धान के खेतों का स्मरण किया था,
और इस प्रकार
मैं वहाँ से बचकर आ गया था।

तिमु० ग्रं० ५ द० ७२, पद ७

अप्पर का अपने ध्येय यानी सनातन धर्म की पुनः प्रतिष्ठा का ध्यान अभियोग की उन दुःखदायी स्मृतियों से कहीं अधिक था।

प्रथम तीर्थयात्रा

अपनी बहिन और तिरुवादिवई वीरत्तानम मे बसे हुए भगवान शिव से विदा लेकर अप्पर ने तमिलनाडु के शिव मंदिरो से अपनी तीर्थयात्रा का प्रथम चरण आरम्भ किया। वे पडोस के ही तिरुवनईनल्लूर गये और वहाँ से आमत्तूर तिरक्कोवल्लूर और अन्य कई तीर्थ स्थलो से होते हुए अन्त मे पैन्नाकाडम पहुँचे।

इस सदर्भ मे यहा यह बताना समीचीन होगा कि सेक्किषार द्वारा दिये गये अप्पर के जीवन वृत्तान्त से ज्ञात होता है कि अप्पर फिर कभी तिरुवादिकई वीरत्तानम या अपनी बहिन के पास वापस नही लौटे। अप्पर और तिरुज्ञान सम्बन्धर द्वारा की गयी कम से कम छह तीर्थ यात्राओ मे एक अन्तर है। अपनी हर तीर्थ यात्रा के बाद तिरुज्ञान सम्बन्धर अपने जन्म स्थान सीकाषी वापस लौट आते थे, किन्तु अप्पर की समस्त तीर्थ यात्राएँ मिलकर एक ऐसी लम्बी यात्रा हो गयी थी, जो तिरुवादिकई वीरत्तानम से आरम्भ होकर तिरुप्पुगलूर मे समाप्त हुई। उस समय वे इक्यासी वर्ष के थे और वे वहा के तीर्थस्थल मे बसे हुए भगवान शिव मे विलीन हो गये थे और इस प्रकार उन्हे 'मुक्ति' मिल गयी थी।

पेन्नाकाडम के शिव मन्दिर मे, जिसे तुगानई मदम कहते हैं, उन्होने खडे होकर भगवान से प्रार्थना की

तुम्हारे पवित्र
स्वर्णिम चरणो मे मुझे एक याचना करनी है
यदि अपने इस दास का,
जो तुम्हारी आराधना करता है,
जीवन बचाना तुम्हे उचित लगता है
तो
हे प्रभु ! हे पवित्र अग्निपुंज !
तुम जो
बादलो से ढके कडन्दई के तुगानई मदम मे बसे हो
अपने त्रिशूल द्वारा विद्युत् गति से
मुझे गोद दो,
जिसमे मेरा समस्त अपयश, मेरे सारे कलंक
धुल जायें ! तिमु० ग्र० ४ द० १०९ पद १

उनकी इस याचना से प्रतीत होता है कि अपनी तीर्थ यात्रा के आरम्भ में ही अप्पर को कटु आलोचना और स्वधर्म त्याग के आरोपों का सामना करना पड़ा था। उनकी अपनी बहिन तथा उनके समकालीन लोग एवं कई शताब्दियों के बाद सेक्किषार भी उन्हें विधर्मी ही समझते थे, यद्यपि वे विधर्मी नहीं थे। उनकी प्रार्थना करुणानिधान भगवान ने सुन ली। भगवान शिव के जुलूस में किसी शिव भक्त ने अनायास ही उनके कंधे पर त्रिशूल और शिव वाहन नादी का चिह्न गोद दिया, और इस बात का किसी को पता तक नहीं चला।

ध्यान देने की बात तो यह है कि अप्पर से पहले कभी भी किसी ने इस प्रकार की अनोखी याचना से भगवान से की और न ही किसी शिव भक्त का यह अनोखा वरदान ही मिला। वास्तव में शैवों में शरीर गोदवाने की रीति ही नहीं है। केवल वैष्णव पुरुष और विवाहित महिलाएं ही अपनी बाहों पर शंख एवं चक्र गोदवाती हैं। यह गोदना जिसे समाश्रयानम कहते हैं गुरुद्वारा सम्पन्न किया जाता है। इसलिए अप्पर की यह प्रार्थना कि उन्हें त्रिशूल से गोदा जाये तमिलनाडु के शैव भक्तों के इतिहास में अद्वितीय है। सम्भवतः उन्होंने यह प्रार्थना इसलिए की थी कि अपनी तीर्थयात्रा के दौरान जब भी वे किसी मंदिर में जाते थे लोग उन्हें सन्देह की दृष्टि से देखते थे।

पेन्नाकाडम से अप्पर आरातुरई तिरुमुतुकुन्ड्रम (वह पवित्र पर्वत शिखर जिसे अब विरुद्धाचलम कहते हैं) तथा अन्य स्थलों पर होते हुए तिल्लई पहुंचे, जिसे अब चिदम्बरम के नाम से जाना जाता है।

तिल्लई आवासनिगम का स्थान है और इसकी अपनी विशिष्ट शोभा है यह तमिलनाडु के शिव मंदिरों में सर्वश्रेष्ठ है। यहां पर अप्पर ने विभोर होकर नृत्य किया और भजन गाये। सेक्किषार ने उनकी इस अवस्था का वर्णन इन शब्दों में किया है

पूजा की मुद्रा में जुड़े थे उनके हाथ।
मस्तक पर,
अनवरत झड़ी के समान
आंख बरसा रही थी अश्रु,
मस्तिक और उनके ज्ञान चक्षु
असीमित प्रेम ज्वर से पिघले जा रहे थे।
और वह पवित्र शरीर गिरता था भूमि पर
बार-बार,
और उठता भी था बार-बार।
सीमा नहीं थी,
अप्पर की उत्कण्ठा की, ललक की,

जब वे प्रभु के समीप रहते थे
और विभोर होकर
उलये वालों को
लय ताल से साथ झटकाते हुए नृत्य कर रहे थे,
करते ही जा रहे थे ।   ति० पद १६७

यहाँ अप्पर ने बहुत से भक्तिगान गाये। एक गीत उद्धृत है
जब कि
मैं गा भी नहीं सकता
एक भक्त की तरह
हे श्रेष्ठ हे पूर्ण योगी !
तब तुम्ही बताओ,
मैं तुम्हारी आराधना कैसे करूँ ?
और केवल इसी कारण
मुझे ठुकराओ मत
हे अनादि हे अनन्त प्रभु
हे परमपिता, हे नटराज,
तुम, तिल्लई के ज्ञान मन्दिर में
नृत्य करते हो।
तुम्हारा वह अपूर्व नृत्य देखने
आया है तुम्हारा
सेवक !   तिमु० ग्र० ४ व० २३ पद ८

वह अद्वितीय प्रभु
जिसका ध्यान करते हैं, सारे तपस्वी
वह, जो वेदों का सार है,
जो अणु मात्र है
किन्तु
जिसके समस्त गुण कभी कोई नहीं जान पाता,
जो शहद है, दुग्ध धारा है,
जो अलौकिक प्रकाश है
जो देवाधिदेव है !
और जो बड़ा है
ब्रह्मा और विष्णु से भी

जो समाया है (अन्तरस्थ है)
अग्नि में, वायु में, लहराते समुद्र में
और पर्वत शिखरों में !
वह प्रभु जो रहता है
पेरुमपत्रा—प—पुलियूर में।
कैसे बीत गये वे सभी दिन
उसके स्मरण के बिना।
नहीं
वे दिन तो हमने
जिये ही नहीं !

तिमु० प्र० ६ द० १ पद १

अप्पर ने नटराज के ताण्डव से स्वयं को दूर कर लिया और तिरवक्कोपालई की ओर चल पड़े। यहाँ आकर एक वधू के समान रहस्यमयी प्रेम परिपूर्ण भाषा में उन्होंने एक गीत लिखा जो प्रेमाग्नि से विह्वल कोई नारी ही गा सकती है

खोलकर अपने
विद्रुम अधर
वह कहती है
'हे स्वर्ग में रहनेवाले देवताओं में देवता !'
और, कहती है
'प्रभु जिसके मृग के समान दमकते कन्धों पर खिंची हैं,
श्वेत भस्म की तीन आड़ी रेखाएँ !'
वह कहती है,
'प्रभु जिसकी हंस के समान चाल है,
और जो घिरा हुआ है प्यासी सी मेखला से,
प्रभु, जो सबसे अधिक दूर रहनेवाले से भी अधिक
दूर है',
कभी सोचता हूँ,
क्या उसने कभी कारिप्पालाई में रहनेवाले
उस प्रभु को देखा है,
जहाँ सागर
असंख्य मूंगे बिखेर जाता है
अपने तट पर।

तिमु० प्र० ४, द० ८, पद १

तिरुवक शीवालइ की यह याना की तिल्लई यात्रा का एक विष्कम्भर ही था। अब वे फिर तिल्लई की आर वढे और साथ ही उस नटराज की आर भी गय, जिसे वे कभी भुला नही सक । उ होन लिखा ह

वह, जिसने अपनी
खजूर के समान लम्बी
सूड और अपने तीन उद्गमना से
हाथियो के गुप्त स्थानो को खोज निकाला,
वह, जो उन सभी के मस्तिष्क को
अपना निवासस्थल वनानेवाला ह,
जो उसका ध्यान करते ह,
वह
जो अनेक रुप धारण करता हे
आर जो
ज्ञान रुपी मदिर का नटराज हे,
उस प्रभु को भूलकर
क्या, मैं एक निमिपमान के लिए भी
जीवित रह सकता हूँ ?

तिमु० प्र० ५ द० २ पद १

जब वे इस प्रकार तिरलई म अपने दिन बिता रहे थे उनक अन्य भक्तो ने उन्ह एम बालक के विषय म बताया जिसको स्वय प्रकृति अपना दूध पिलाकर पाल रही थी। यह सुनकर उनस रहा न गया और व तिल्लइ छाडकर तिरुप्पुकली की आर चल पडे जा सीकापी क वारह नामा म से एक है तथा जा तिर ज्ञान सम्बधर का जमस्थान भी है।

६

पिता-पुत्र का मिलन

तिरु ज्ञान-सम्बन्धर ने शिव मंदिरों की तीर्थयात्रा का चौथा चरण सम्पन्न कर लिया था। उनका प्रथम चरण केवल नाममात्र का ही था क्योंकि जब उन्होंने सीकाषी में अपना पहला गीत गाया था और भगवान के जन्मस्थलवाले मन्दिर में उनकी आराधना की थी, उसके पश्चात वे पड़ोस में स्थित कोलाक्का गये थे। वहां वे अपने पिता के कंधों पर चढ़कर गये थे और उस तीर्थ-स्थल में भगवान शिव की आराधना में अनेक गीत गाने के बाद सीकाषी लौटकर आये थे।

उनकी यात्रा का दूसरा चरण थोड़े समय के लिए था, जिसमें उन्होंने केवल दस तीर्थस्थलों का भ्रमण किया था। अपनी यात्रा के तीसरे चरण में वे केवल तीन तीर्थस्थलों पर ही गये थे और अन्त में अपनी यात्रा के चौथे चरण में उन्होंने बीस तीर्थ स्थलों के दर्शन किये थे। जब वे सीकाषी लौटकर आये थे, तो उनका यज्ञोपवीत संस्कार किया गया था। उस समय उनकी आयु सात या आठ वर्ष की रही होगी।

अप्पर लगभग तुरंत ही सीकाषी जा पहुंचे। सेक्किषार ने अप्पर के सीकाषी पहुँचने का वर्णन इस प्रकार किया है

घिरे खड़े थे
अपने भक्तों से तिरुनावुक्कुअरसर
शरीर पर पवित्र भस्म थी
और प्रभु की आराधना में जुड़े थे दोनों हाथ,
नेत्रों से स्नेहाश्रु बह रहे थे
जिनसे
देखनेवालों का मन-मस्तिष्क द्रवित हो रहा था।
वह,
जिसने सागर में एक ऐसे पत्थर का सहारा पाया,
जो समुद्र पर तैर रहा था,
वही आज तिरुप्पुकाली* आ पहुँचा है

---

*सीकाषी का दूसरा नाम।

जो, उस संत का जन्मस्थल है
जिसने एक वरदान की तरह
तमिल में
वेदों की रचना की है।"

ति० पद १८०

जब तिरु ज्ञान सम्बन्धर को पता चला कि नावुक्करसर आ पहुंचे हैं तो उन्होंने कहा— यह मेरे पिछले पुण्य प्रतापों का ही फल है' और अपने परिजनों के साथ उन्हें लिवाने जा पहुंचे। उन्होंने अपने सामने एक अद्वितीय व्यक्तित्व को देखा जिसका वर्णन सविस्तार न इस प्रकार किया है

मन-मानस में भरा हुआ था असीम प्यार,
अपूर्व आनन्द से बार-बार सिहर रहा था
उनका शरीर
कमर में लिपटी हुई केवल कंदैं
किन्तु
लगता था जैसे
बहुत अधिक वस्त्र पहन रखा हो
हाथ में एक कोदण्ड भर,
और आँखों से बहती हुई
अनवरत अश्रुधारा।
मस्तक पर पवित्र भभूति चमक रही थी
कुछ इस प्रकार,
जैसे कि
याद दिला रही हो स्वयं भगवान शिव की !
ऐसे अप्पर उपस्थित थे
तिरु-ज्ञान सम्बन्धर के सामने !

ति० पद २७०

इधर
तिरु ज्ञान सम्बन्धर
आदर भाव से दोनों हाथ जोड़कर
अप्पर की ओर बढ़े
और उधर अप्पर
हृदय में स्नेह का सागर छिपाये आगे बढ़े
उन परिजनों के बीच से रास्ता बनाते हुए
जो तिरु ज्ञान सम्बन्धर को घेरे खड़े थे,

और तब वे गिर पड़े उनके चरणों में।
और उस बालक ने, जिसने अपने आर्त्त स्वर से,
आसुओं से द्रवित कर दिया था
नदीवाहक शिव को,
जिस प्रकार अपने चरणों में पड़े—
उस व्यक्ति को उठाया
अपने फूल जैसे कोमल हाथों से,
वह शोभा तो अवर्णनीय है!
और उनकी ओर घूमकर
बहुत प्यार से कहा,
'अप्पर! ओ पिता!'
और जिसके उत्तर में अप्पर ने कहा—
'मैं तुम्हारा दास हूँ प्रभु!' ति० पद १८२

और उस दिन से वह महान व्यक्ति जन्म के समय जिसका नाम रखा गया था मरुलनीक्कियार और जिसे उसके प्रारम्भिक गीतों के लिए स्वयं भगवान शिव ने नावुक्करसर (वाणी का देवता) के नाम से सम्मानित किया था, तमिलनाडु में और जहाँ कहीं भी तमिलवासी रहते हैं, केवल "अप्पर" के नाम से ही जाना जाता है। और जब तक एक भी तमिलवासी जीवित रहेगा—अर्थात् सृष्टि के अन्त तक उस अप्पर के नाम से ही जाना जायगा। उधर अप्पर प्रसन्नता से फूले न समाये कि वे उस बालक के चरण कमलों की पूजा कर सके थे। इधर वह बालक प्रसन्न था कि उसे अप्पर के चरणों की पूजा का अवसर मिल सका था और अब तब दोनों के ही मन में प्रभु की आराधना करने की एक उमंग जागी कि वे नाव पर सवार होकर बाढ़ के पानी को पार करके उस मन्दिर में जा पहुँचे। वहाँ पहुँचकर भगवान के सामने खड़े होकर तिरु ज्ञानसम्बन्धर ने कहा,

'अप्पर! अपने प्रभु का गुणगान करो।' और तब अप्पर गाने लगे

जिस दिन
सागर ने संसार में सबको
अपने अन्तराल में छिपा लिया था,
लोग कहते हैं,
चार-पांच नन्ही चिड़िया
तुम्हारे चरणों का सहारा लेकर

पार उतर गयी थी !
वह प्रभु
जो कादुमालम* में रहता है
और जिसने अपनी घुँघराली लटों में
शीतल चन्द्र को धारण किया है,
जहाँ से पावन भागीरथी पवन के साथ
थिरक-थिरक कर बहती है—
इस असार संसार में,
जो सागर के बाहुपाश में लिपटा हुआ है,
उसे प्रभु का दास होने के अतिरिक्त
कोई और कुछ कर भी क्या सकता है ?

तिमु० प्र० ४, द० ८२, पद १

अप्पर ने अपना बहुत समय तिरु ज्ञान सम्बन्धर के साथ बिताया और बाद में जब कावेरी नदी के किनारे बसे भगवान शिव के तीर्थस्थलों के दर्शन की लालसा बहुत तीव्र हो उठी, तो उन्होंने उनसे विदा ले ली।

*काटुमालम सीकारई के बारह नामों में से एक नाम।

१०

तिरुवडि दीक्षा

आध्यात्मिक समार म प्रविष्ट होन के लिए कई प्रकार क सस्कार सम्पन्न किये जाते है। इन सस्कारो को दीक्षा कहते हैं। एक होती है नयन दीक्षा— जिसम गुरु अपन शिष्य पर अपनी कृपा दृष्टि करत है, दूसरी होती ह स्पर्श दीक्षा— जिसम गुरु अपन हाथ अथवा अन्य किसी अग स अपन शिष्य क शरीर का स्पर्श करत हैं, एक और होती है, मन्त्र दीक्षा—जिसम गुरु अपन शिष्य को एक मत्र सिखाते हैं और अतिम है तिरुवडि दीक्षा—जिसम गुरु अपन शिष्य क मस्तक पर अपन चरण रखत ह।

सत मानिक्कवासगर सत सुदर मूर्ति स्वामिकल और अप्पर के सदर्भ म कहा जाता है कि भगवान शिव न स्वय उन्ह तिरुवडि दीक्षा प्रदान की थी। मानिक्कवासकर न अपन जीवन की इस अभूतपूर्व घटना का वर्णन स्वय किया है। उन्होन कहा है मैं बता सकता हूँ कि किस प्रकार भगवान शिव न तिरुविडईमरूदूर म अपना पदचिह्न मर मस्तक पर बनाया था। सत सुदरामूर्ति स्वामिखल के विषय म एक रोचक प्रसग है। सेविक्यार ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है

उस क्षण,
जब हरे घोडो के रथ पर सवार
सूर्य आकाश को पार करके,
पश्चिमी सागर मे डुबकी लगाने वाला था,
वह (सुन्दरमूर्ति स्वामियल)
तिरुवादिकई के बाहरी भाग मे पहुँचे,
उस समय वह कह रहे थे,
इस महान नगर मे—
जहा ईश्वर भक्त तिरुनावुक्कु रहते ह,
जिनकी समस्त ससार स्तुति करता ह,
ऐसे भक्त
जिनक हाथो मे कोदण्ड है
और जो नदीवाही भगवान शिव की
पूजा-अर्चना स्वय अपने हाथो से करते है—
पाँव रखते हुए भी मुझे भय लगता है।

इस प्रकार कहते हुए
उन्होंने
नहरों के जल द्वारा शीतल किए गए मैदानों के पार बसे
तिरुवेण्णैनल्लूर में प्रवेश किया
उस 'मठम' में जो घिरा हुआ था
उन उपवनों से
जहां मधुमक्खियों की गूंज समायी हुई थी।

वनतोण्डर* जिनके हृदय में
कल-कल करती पेन्नै नामक नदी के उत्तर में
बसे हुए वीरत्तानम् के प्रभु के प्रति
असीम प्यार भरा था अपनी शय्या पर गये।
उस समय उनके प्रसन्नचित्त परिजन भी
घोर निद्रा में डूब गये।
यह देखकर
वीरत्तानम वासी प्रभु ने
चुपचाप 'मठम' में प्रवेश किया।
वे थे एक वृद्ध ब्राह्मण वेश में
और उन्होंने अपने चरण-कमलों को
सुन्दरमूर्ति के पुष्प मण्डित मस्तक पर रखा,
जो अपनी शय्या पर निद्रामग्न होने का
ढोंग कर रहे थे
आरूरन** ने इस स्थिति को समझा और बोले
'हे वेदों के ज्ञाता, विप्रवर।
तुमने मेरे मस्तक पर अपने पांव रख दिये हैं।'
प्रभु ने प्रत्युत्तर में कहा—
'मुझे राह का ज्ञान नहीं था
मैं वृद्ध भी हूँ,
इसी से ऐसी भूल हो गयी है।'
तमिलनाथन* ने इस बात को मानकर

*वनतोण्डर — ऋणानु भक्त भगवान शिव द्वारा सुन्दरमूर्ति स्वामिगल को दिया गया एक नाम।
**सुन्दरमूर्ति स्वामिगल के अन्य प्रचलित नाम।

अपना सिर हटाया और करवट बदल कर
फिर सो गये ।
एक बार उस वृद्ध ब्राह्मण ने अपने पाँव फैलाये
और उनके मस्तक पर रख दिये,
तो तिरुनावलूर के प्रभु ने कहा—
'आखिर बात क्या है ?
तुमने कितनी ही बार मुझे ठोकर मारी है ।
तुम कौन हो भाई ?'
अपनी जटा में गंगा को
धारण करनेवाले प्रभु ने कहा—
'तुम्हें अभी तक पता नहीं चला ?'
और अंतर्धान हो गये ।

सेविक्कियार सङ्कुत्तु आक्कीह पुराणम पद ८३ से ८७

हाल ही में उन्नीसवीं शताब्दी में श्री रामकृष्ण परमहंस ने नरेन्द्र को तिरुवडि दीक्षा दी थी । यही नरेन्द्र स्वामी विवेकानन्द के नाम से विश्वविख्यात हुए । उन्होंने अपने अनुभव का वर्णन इस प्रकार किया है

'मैंने देखा वे अपने छोटे से बिछौने पर अकेले बैठे थे । मुझे देखकर वे प्रसन्न हुए और बहुत प्यार से उन्होंने मुझे पास बुलाकर उसी बिछौने पर एक ओर बैठने को कहा । किन्तु क्षणभर बाद ही मैंने उन्हें भावातिरेक से व्याकुल देखा । उनकी दृष्टि मेरे चेहरे पर गड़ी हुई थी । वे धीरे से बुदबुदाये और मेरी ओर बढ़े । मैंने सोचा, सम्भवतः वे पहले की तरह ही कोई विलक्षण बात करेंगे । इससे पूर्व कि मैं उन्हें रोक पाता उन्होंने अपना दाहिना पैर मेरे शरीर पर रख दिया । यह स्पर्श अभूतपूर्व था । मेरे शरीर में जैसे बिजली दौड़ गयी । मेरी आँखें खुली हुई थीं और मैं देख रहा था कि कमरे की दीवारें, कमरे की प्रत्येक वस्तु तेजी से चक्कर काट रही है, चक्कर काट रही है और शून्य में विलीन होती जा रही है समस्त विश्व यहाँ तक कि मेरा स्वयं का व्यक्तित्व जैसे एक साथ एक अनाम शून्य में खो गया था—एक ऐसा व्यापक शून्य जिसमें सब कुछ समा गया था । मैं बहुत डर गया था । मुझे लगा मृत्यु मेरे सामने खड़ी है । अनायास ही मैं चीख पड़ा— यह आप क्या कर रहे हैं ? घर पर मेरे माता पिता हैं और यह सुनकर वे हँसने लगे । उन्होंने मेरी छाती पर हाथ फेरकर कहा, 'ठीक है । आज यहीं तक सही । एक दिन समय आने पर तुम स्वयं जान जाओगे ।' उनके मुख से यह शब्द सुनते ही वह अद्भुत घटना अदृश्य हो गयी । मैं जैसे एक बार फिर मैं

---

*सुन्दरमूर्ति स्वामिगल के अन्य प्रचलित नाम ।

बन गया और अन्दर बाहर सब पूर्ववत् हो गया।

इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि अप्पर भी तिरुवदि दौड़ा जाना चाहते थे? इसीलिए तिरुज्ञान सम्बन्धर से विदा लेने के बाद वे अनेक शिव-तीर्थों की यात्रा करते हुए वे तिरुवलिमुदुम पहुँचे। उस मंदिर में जाकर वे भरी हुई आँखों से प्रभु की प्रार्थना करने लगे

हे प्रभु!
इससे पूर्व कि मृत्यु मुझे अपना ग्रास बना ले,
अपने पावन चरणों से मेरे मस्तक पर
अपने चरण चिह्न
अंकित कर दो
किन्तु यदि तुम छोड़ दोगे
मुझ अभागे भाग्य पर,
तो यह कलंक तुम्हारी कीर्ति पर
एक धब्बा बनकर रह जायेगा

हे प्रभु!
तुम, जिसके हाथों में प्रज्ज्वलित अग्नि है,
वह अग्निपुंज भी तुम्हीं हो प्रभु,
तुम जो तिरुवलिमुदुम में बसे हो।

तिमु० प्र० ४, द० ९६, १

उनकी इस प्रार्थना को स्वीकार करके प्रभु ने उन्हें नेल्लोर आने का आदेश दिया। और अप्पर वहाँ गये थे। मंदिर में प्रवेश करके उन्होंने प्रभु को साष्टांग दण्डवत किया। जैसे ही वे उठने को हुए कि भगवान शिव ने कहा, 'तथास्तु' और उसके साथ ही उन्होंने अप्पर के मस्तक पर अपने चरणकमलों का मुकुट रख दिया। अप्पर उठ खड़े हुए, और प्रसन्नता से विभोर होकर गाने लगे

उन्होंने ऐसे भक्त बनाये हैं,
जिनका हृदय प्रभु के ध्यान में
द्रवित होता रहता है
उन्होंने दुष्कर्मों को भगा दिया है
और वे दुष्कर्म, उनके आदेश के बाद
रुक नहीं सके।
उन्होंने मदमस्त गजराज की खाल ओढ़ ली
एक चादर की तरह

और
दूज के बाल चन्द्र को
अपने मस्तक पर धारण किया
और जब
देवताओं के वंशज
उनकी चरण-धूलि लेने आये
और निकट आकर उनको दण्डवत किया
तो जैसे
युगल कमलों की
पखुरियां खिल गयी
और उनमें से
जलधार के समान
मधु निकल पड़ा
जिसने देवताओं के
स्वर्णमण्डित ताजों को
सुधामय कर दिया।
उन्हीं यशस्वी चरणों को आज
तुमने मेरे मस्तक पर
रखा है,
मेरे नल्लूरवासी प्रभु!
धन्य हो तुम।

तिमु०, प० ४, द० १४, पद १

यहाँ यह कहा जा सकता है कि तिरु ज्ञान सम्बन्धर को तिरुवडि दीक्षा कभी नहीं प्राप्त हुई वरन् उन्हें तो कोई भी दीक्षा नहीं मिली। उन्हें दीक्षा की आवश्यकता ही नहीं थी क्योंकि उनकी आत्मा तो प्रभु में विलीन हो चुकी थी, किन्तु जिसने प्रभु का सन्देश देने के लिए ही इस पृथ्वी पर जन्म लिया था। वे अपने पूर्वजन्म के कर्मों के फलस्वरूप पैदा नहीं हुए थे। वे तो 'ईश्वर कोटि'[1] के थे। श्री रामकृष्ण परमहंस ऐसे व्यक्तियों को इसी नाम से पुकारते थे।

---

१ दे० श्री रामकृष्ण परमहंस का दर्शन।

११

अप्पर और उनके प्रशंसक

अप्पर अपनी तीर्थयात्रा पर फिर चल पड़े। उन्होंने कुछ अन्य तीर्थस्थानों का भ्रमण किया किन्तु उनका ध्यान क्रमशः नल्लूर में लगा रहता था, और वहाँ उन्हें जो प्रभु का आशीर्वाद प्राप्त हुआ था उसके स्मरण मात्र से उनका हृदय भर जाता था।

वे तिंगलूर जा पहुँचे। नगर के द्वार पर उन्हें एक प्याऊ दिखाई दिया और उन्हें यह जानकर आश्चर्य हुआ कि उसका नाम उनके नाम पर रखा गया था। उस प्याऊ के चारों ओर झण्डे लगे हुए थे जिन पर अप्पर का नाम लिखा हुआ था। उन्होंने पास खड़े एक व्यक्ति से पूछा, "यह प्याऊ किसने बनवाया है और इसका यह नाम किसने रखा है?" इस पर उन्हें जो उत्तर मिला उससे वे चकित रह गये। उस राहगीर ने कहा, 'अप्पूदि आदिगल ने यह प्याऊ बनवाया है और अरसु के नाम पर इसका नामकरण किया गया है। यही नहीं, आस पास की सभी गलियाँ, शालाएँ, बाग—सच तो यह है कि प्रत्येक सम्भव स्थान का नाम उन्होंने अप्पर के नाम पर ही रखा है।'

यह सुनकर अप्पर सोच में डूब गये कि आखिर माजरा क्या है। उन्होंने फिर पूछा, "वह कहाँ रहते हैं?"

उसने उन्हें बताया, 'जो सज्जन गले में जनेऊ डाले यहाँ खड़े थे वे इसी नगर के वासी हैं। कुछ देर पहले ही वे अपने घर गये हैं। उनका घर भी कोई दूर नहीं पड़ता है।'

अप्पर उस स्थान से तुरन्त उस प्याऊ के मालिक के घर जा पहुँचे। ब्राह्मण श्रेष्ठ अप्पूदि आदिगल ने जब सुना कि प्रभु का कोई भक्त उनके द्वार पर खड़ा है तो वे उनकी अगवानी करने तुरन्त बाहर आ गये। अप्पर को देखते ही वे उनके चरणों में गिर पड़े। उन्होंने अप्पर से, जो स्वयं उस समय में जब वे उन्हें प्रणाम करना सोचते थे दूसरों के चरणों में झुकते आ रहे थे, कहा, 'सचमुच मैंने कभी अनन्त पुण्य कर्म किये होंगे, जो आपने अनायास ही मेरे घर पर पहुँच कर मुझे अनुगृहीत किया है। बताइए, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ?'

अप्पर ने उत्तर दिया, "हम अभी अभी तिरुप्पलनम से प्रभु की आराधना करके लौटे हैं। रास्ते में मैंने देखा कि आपने प्याऊ बनवाया है। इसके अतिरिक्त भी आपने दया व दान के अनेक कार्य सम्पन्न किए हैं और करते जा रहे हैं। मैं एक

विशेष कारण से आपके पास आया हूँ। मैं जानना चाहता हूँ कि प्याऊ अपने नाम पर चलाने स्थान पर आपने किसी और के नाम पर क्यों चलाया है?

यह सुनकर ब्राह्मण को बहुत चोट पहुँची और उन्होंने उत्तर दिया

"यह आप क्या कह रहे हैं!" यह कहते-कहते उन्हें क्रोध भी आ गया और वे कहने लगे— "किसी और का नाम? क्या इसी प्रकार उस महान व्यक्ति के बारे में बात की जाती है जिसने भगवान की भक्ति के बल पर राजा और उसके चाटु-कारों के षड्यन्त्र पर विजय प्राप्त की?" वे कहते गये— "क्या भगवान के प्यारे इस संसार में ऐसा भी कोई व्यक्ति है जिसको इस महान आत्मा के बारे में मालूम नहीं है, जिसे लहराते हुए समुद्र की लहरों ने चट्टानों की नाव पर बिठाकर किनारे पहुँचा दिया था? आप जो इतने आध्यात्मिक बनते हैं आखिर इस शब्द को आपने अपने मुख से निकाला भी कैसे? और मुझे बताइए आप हैं कौन? [illegible]!"

अप्पर ने विनम्र शब्दों में अपना परिचय देते हुए बताया कि वे ही वह व्यक्ति हैं जिसे उदरशूल की भयंकर पीड़ा सहनी पड़ी थी, और जिन्होंने शैव धर्म को एक बार फिर स्वीकार कर लिया है। यह सुनकर अप्पूदि आदिगल ने अपना हाथ जोड़-कर उन्हें प्रणाम किया। उनके नेत्रों से जल की अविरल धारा बह रही थी। होठों से अस्फुट ध्वनि निकल रही थी। उनका शरीर रोमांचित हो उठा था। भावा-तिरेक में वे अप्पर के चरणों में गिर पड़े। प्रत्युत्तर में अप्पर ने अप्पूदि आदिगल को साष्टांग प्रणाम किया। वे उस समय इतने प्रसन्न हो रहे थे जैसे उन्हें अपना समस्त खोया वैभव फिर प्राप्त हो गया हो। उन्मादातिरेक में पागलों के समान कभी गा रहे थे कभी नाच रहे थे तो कभी रो रहे थे।

उन्होंने अप्पर को अपने घर आने के लिए आमन्त्रित किया और अपनी पत्नी से तरह ऐसा भोजन तैयार करने के लिए कहा जिसे वे स्वयं भगवान को अर्पित कर सकें। अप्पूदि आदिगल की पत्नी ने ऐसा ही भोजन पकाया और अपने एकलौते बेटे को बगीचे में केले का पत्ता लाने का आदेश दिया जिस पर वह अप्पर को भोजन परोस सकें।

वह बालक प्रसन्नता से भर उठा कि उसे यह कार्य सौंपा गया है। वह भागा भागा एक बाग में पहुँचा और ज्यों ही वह एक अच्छा और पर्याप्त बड़ा पत्ता काटने को हुआ कि पत्तों में छिपे हुए एक साँप ने उसे डस लिया। बालक ने साँप को देखा और समझ गया कि क्या हुआ है? इससे पहले कि विष उस पर अपना असर दिखाता वह अपना कार्य पूरा करने के लिए पत्ता हाथ में लेकर दौड़ा। उसने माँ के हाथ में पत्ता थमाया ही था कि वह चक्कर खाकर गिर पड़ा। माँ ने उसकी विष से नीली पड़ती देह देखी। सर्प दंश का स्थल भी उसकी निगाह में आया। उन्होंने बालक के शरीर को एक चटाई में लपेटा, और पिछवाड़े के बरामदे में ले जाकर रख दिया और वापस लौट आयी। उसके मुख पर इस भयंकर घटना का

चिन्ह तक नहीं था। उसने अपने पति को अलग बुलाकर चुपके से इस घटना के बारे में बताया और उनके कहने के अनुसार ही अतिथि सत्कार में इस प्रकार व्यस्त हो गए जैसे कुछ हुआ ही न हो। ज्योंहि अतिथि ने अप्पर को भोजन करने के लिए आमन्त्रित किया।

अप्पर ने अन्दर आकर अपूदि अडिगल, उनकी पत्नी और बच्चों को निकट बुलाया और अपने हाथों से उनके मस्तक पर भस्म लगाई। सबसे बड़े बेटे को वहाँ न देखकर उन्होंने माता पिता से उसे भी बुलाने का आदेश दिया, जिससे वे उसे भी भस्म लगाकर आशीर्वाद दे सकें। माता पिता के चेहरे पर क्षणभर के लिए व्यग्रता दिखाई दी पर उन्होंने कहा 'वह इस समय यहाँ नहीं है।'

उनके चेहरे पर चिन्ता और व्यग्रता देखकर अप्पर ने कहा 'मुझसे सच सच बताइए, बात क्या है?' सदा सच बोलने का अपना कर्तव्य निबाहते हुए हिचकिचाते हुए और दुःख से उन्होंने बताया कि उनके आतिथ्य सत्कार में एक विघ्न आ पड़ा है। फिर उन्होंने विस्तारपूर्वक उस घटना का वर्णन किया।

यह जानकर कि उस दम्पत्ति ने कैसा त्याग किया है अप्पर ने प्रशंसा भरे स्वर में कहा — 'तुम धन्य हो! तुम्हारा व्यवहार अद्वितीय है। भला पृथ्वी पर और कौन ऐसा कर सकता है?' यह कहते हुए वे उनके पीछे पीछे उस स्थान पर जा पहुँचे, जहाँ मृत बालक को छिपा दिया गया था। वे भगवान शिव से उस बालक को जीवनदान देने की प्रार्थना करने लगे

वही एक पवन है
जिस पर हमारे विचार
ऊपर चढ़ते हैं,
एक ही वह चन्द्रमा है
जिसे वह धारण करता है,
एक ही मुकुट है
उसके उन हाथों में
जिनमें उसके भक्त
उसे प्रसाद अर्पण करते हैं।
और एक ही है वह नन्दी
जिस पर वह चढ़ता है।
दो ही वे पद हैं
जिनकी देवता भी पूजा करते हैं
दो ही वे हैं—
पुरुष और प्रकृति

जिसके सुशोभित है कानो मे नारियल के
पत्तो की बालियाँ
दो ही है उसके आकार
निराकार और साकार
और दो ही है हिरन और गदा (जाविनी)
जो उसकी शरण मे जाते हैं।

तीन है उसके नेत्र
जिनमे से एक है उसके मस्तक पर,
तीन ही हैं उसके त्रिशूल की नोकें,
तीन ही होते हैं—धनुष, कमान और तीर,
और तीन ही थे वे त्रिकूट
जिन पर उसने प्रहार किया था।

चार उसके मुख है,
चार ही जन्म के उद्गम—अण्ड, स्वेद, पृथ्वी और गर्भ
चार ही है पद—उसके वाहन के
और चार ही है वेद—
जो उसने रचे हैं।

पाच हैं झूमते हुए
उसके सर्पो के फन
पाच ही इन्द्रियाँ है,
जिन्हें वह जीतता है
पाच ही उसके[1] तीर है
जो उसका कोप-भाजन बना था
और पाच ही है वे वस्तुएँ[2]
जिनमे वह स्नान करता है।
छ है ज्ञान की शाखाएँ
—जो उसने बनायी हैं,
छ ही हैं उसके पुत्र के मुख—

१ कामदेव

२ गऊ द्वारा प्रदत्त पाँच वस्तुए दूध दही घी गोमूत्र व गोबर

छ हा पद है उस मधुमक्खी के,
—जो उसके हार पर बैठती है
और छ ही है स्वाद[1]
—जो उसके भोजन म होते है।

सात है उसके द्वार
हर प्रलय के बाद बनाए गए वर्ग[2]
सात ही है वे विशाल सागर जो उसने बनाये है
सात ही ससार है
—जिन पर वह शासन करता है
और सात ही है सगीत के स्वर
—जो उसने बनाये है।

आठ है उसके अविभेद्य गुण
आठ ही प्रकार के पुष्पो से उसका शृगार होता है
आठ ही है उसकी भुजाएँ
और आठ ही है वे मुख्य बिन्दु
—जो उसने प्राप्त किये है।
नौ है वे निकास
—जो उसने मानव शरीर के लिए बनाये है
नौ ही लडे है उस जनेऊ की
जो उसके वक्ष पर सुशोभित हैं

नौ ही है उसकी घुँघराली अलको की लटे
और नौ ही है वे महाद्वीप
—जो उसने विश्व म बनाये है।

दस है नेत्र उसके—
पाच फनो वाले सर्पो के
दस है, जिह्वा उसके उन
पाच फनो वाले सर्पो की
और दस ही है मस्तक[3]

---

१ तीखा खट्टा नमकीन मीठा कडवा और खटमिट्ठा
२ देवता इसान जानवर पक्षी रेगनेवाले कीडे पानी म रहनेवाले जन्तु और पेड पौधे
३ रावण

उसके जो उसके कोप-भाजन बने थे
और जिसे तब तक कुचला गया था
जब तक उसकी दस दंतावलियाँ चूर-चूर नहीं हो गयी।
दम ही होते हैं
अध्यात्म में आत्मा के अनुभव

तिमु० ग्र० ४, द० १८, पद १ से १०

इस प्रकार अप्पर ने भगवान शिव की महिमा का गुणगान किया और अन्त में उनके शरीर में लिपटे भुजंगों का वर्णन इस प्रकार किया कि उसमें उनके गीत में गारुड मंत्र या वशीकरण हो जिससे वह मृत बालक जीवित हो उठेगा। इसके अतिरिक्त पद में इस तरह गिनती गिनने से उस वशीकरण के प्रभाव के लिए पर्याप्त समय भी मिल गया।

प्रभु ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और वह मृत बालक चटाई में इस प्रकार उठ बैठा जैसे वह गहरी नींद से जागा हो।

जब उस बालक की मृत्यु से हुए सूतक की शुद्धि की गयी। अप्पर को फिर भोजन करने के लिए आमंत्रित किया गया। जब भोजन परोसा गया, अप्पर ने अप्पूदि आडिहल व उसके परिवार से अपने साथ भोजन करने का आग्रह किया, जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया। बहुत ही अनिच्छा से अप्पर और अप्पूदि आडिहल ने एक दूसरे से विदा ली और अप्पर फिर तिरुप्पापनम वापस चले गये।

छ हो पद है उस मधुमक्खी के,
—जो उसके द्वार पर बैठती है
और छ ही है स्वाद[1]
—जो उसके भोजन मे होते है।

सात है उसके द्वार
हर प्रलय के बाद बनाए गए वर्ग[2]
सात ही है वे विशाल सागर जो उसने बनाये है
सात ही ससार हैं
—जिन पर वह शासन करता है
और सात ही है सगीत के स्वर
—जो उसने बनाये है।

आठ है उसके अविभेद्य गुण
आठ ही प्रकार के पुष्पो से उसका शृगार होता है
आठ ही है उसकी भुजाएँ
और आठ ही है वे मुख्य बिन्दु
—जो उसने प्राप्त किये है।
नौ है वे निवास
—जो उसने मानव शरीर के लिए बनाये है
नौ ही लडे है उस जनऊ की
जो उसके वक्ष पर सुशोभित हैं

नौ ही है उसकी घुघराली अलकों की लट
और नौ ही है वे महाद्वीप
—जो उसने विश्व म बनाये हैं।

दस है नेत्र उसके—
पाँच फनो वाले सर्पों के
दस है, जिह्वा उसके उन
पाँच फनो वाले सर्पों की
और दस ही है मस्तक[3]

१ [illegible] नमकीन [illegible] और [illegible]
२ [illegible] सात [illegible] और [illegible]
३ [illegible]

उसके जो उसके कोप-भाजन बने थे
और जिसे तब तक कुचला गया था
जब तक उसकी दस दन्तावलिया चूर-चूर नही हो गयी ।
हम ही होते है
अध्यात्म मे आत्मा के अनुभव

तिमु० प्र० / द० १८, पद १ से १०

इस प्रकार अप्पर ने भगवान शिव की महिमा का गुणगान किया और अन्त मे उनके शरीर मे लिपटे भुजगो का वर्णन इस प्रकार किया कि जैसे उनके गीत मे गारुड मन्त्र या वशीकरण हो जिससे वह मृत बालक जीवित हो उठेगा। इसके अतिरिक्त एक से दस तक गिनती गिनने मे उस वशीकरण के प्रभाव के लिए पर्याप्त समय भी मिल गया।

प्रभु ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और वह मृत बालक चटाई से इस प्रकार उठ बैठा जैसे वह गहरी नीद से जागा हो।

जब उस बालक की मृत्यु से हुए सूतक की शुद्धि की गयी। अप्पर को फिर भोजन करने के लिए आमन्त्रित किया गया। जब भोजन परोसा गया अप्पर ने अप्पूदि आदिहल व उसके परिवार से अपने साथ भोजन करने का आग्रह किया, जिसे उन्होने सहर्ष स्वीकार किया। बहुत ही अनिच्छा से अप्पर और अप्पूदि आदिहल ने एक दूसरे से विदा ली और अप्पर फिर तिरुप्पापनम वापस चले गये।

१२

'पिता-पुत्र' का पुनर्मिलन

अप्पूदि आदिहल से विदा लेकर अप्पर एक बार फिर अपनी तीर्थयात्रा के लिए चल पड़े। और घूमते घूमते वे तिरुवारूर जा पहुँचे। यही वह स्थान था जहाँ सुन्दरमूर्ति स्वामिकल ने वे ग्यारह पद लिखे थे जिन्हें तिरुत्तोण्डत्तोगै कहते हैं। इनमें उन्होंने अपने से पूर्व होने वाले सभी तमिलनाडु के संतों के नाम अपने ज्ञान के अनुसार लिखे हैं। इसी सूची से प्रेरणा और मार्गदर्शन लेकर सेक्किषार ने संत चरितावली तैयार की थी। सेक्किषार ने तिरुवारूर के प्रसिद्ध मन्दिर में कमलालयम निवासी भगवान त्यागराज के सम्मुख खड़े अप्पर का अभूतपूर्व चित्रण किया है

एक पावन देह जिसका वक्षस्थल
अश्रु वर्षा से तर था,
एक पावन मुख जिससे—
झर रहे थे,
मधुर तमिल शब्दों के गुथे हुए पुष्प हार
एक पावन मन-मस्तिष्क, जो पूर्णत समर्पित था
प्रभु के स्वर्णिम चरणों में
हाथों में था
एक अद्वितीय अस्त्र
और कोदण्ड
एक व्यक्तित्व, जो बना था—
इस सबसे मिलकर
वह थे अप्पर,
—जो गली-गली को कर रहे थे स्वच्छ
कि जिससे अभ्युदय हो समस्त संसार का
और विभूषित कर रहे थे प्रभु को
अपने गीत-संगीत के द्वारा।

ति० पद २२५

इस प्रका` दव श्रीयान (साक्षात जीवन मुक्तो के एकत्र होने का स्थान) म भक्तो के बीच खडे अप्पर मग्न होकर प्रभु की स्तुति कर रहे थे

दूध जैसी धवल भस्म से,
विभूषित शरीर वाले
प्रभु के चरणो की उपासना को छोडकर
और यह सोचकर
कि स्वय को अच्छा बना सकता—
मैं हाथो म भिक्षा पात्र लिए भटकता रहता हूँ।
सच्चे हृदय से,
आरूर के प्रभु की उपासना छोडकर
जहा कोयल के सगीत पर
नत्य करते हैं मयूर
जिनके घोसले बने ह उन उपवनो मे,
जो भरे हुए हैं ऐसे सुगधित पुष्पो से
जिन्हे कभी किसी ने तोडा नही है—
मैं एक ऐसा अधम चोर बन गया था—
जिसने पके फलो को छोडकर
एक ऐसे बाग को उजाड दिया,
जिसके फल अभी अधपके ही थे।

तिमु० ग्र० ४ द० ५, पद १

बहुत अनिच्छा स तिरुवारूर को छोडकर, अप्पर अपनी यात्रा पर आगे बढे। कई तीर्थ स्थलो स होते हुए व तिरुप्पुकलूर के मदिर म स्थापित प्रभु शिव की आराधना की लालसा हृदय मे सजाये उस ओर चल पडे। उसी समय तिरु ज्ञान-सम्बधर तिरुप्पुकलूर के बाहरी भाग मे पहुँचे और मुरुकनार, जो सक्किपार द्वारा वर्णित तिरसठ सतो म स एक थे के मठ म ठहरे। पिछली बार जब अप्पर तिरु ज्ञान सम्बधर स मिल थ तब व अकेले तीर्थयात्री थे।

इस समय व अनेक भक्तो और अनुयायियो से घिरे हुए थे। सक्किपार ने तिरु-ज्ञान सम्बधर के भक्ता की टोली और अप्पर के मिलन का वर्णन इस प्रकार किया है

जिस समय भक्तो की टोलिया
जो सिर से पाव तक पवित्र भस्म से लिपटी हुई थी,
दोनो ओर से आगे बढी
और एक-दूसरे मे मिली
ऐसा लगा मानो चादनी-से उज्ज्वल दो सागर

—उछाह से आगे वढे हो
ममा गये हो एक-दूसरे म
और एकाकार हो गये हो। — ति० पद २३३

एक दूसरे का अभिवादन करने के वाद दोना सत पुगलूर म प्रविष्ट हुए। वालक के जिज्ञासु प्रश्ना क उत्तर मे अप्पर ने तिरुवरूर की महिमा का वणन किया और यह मत वालक तिरुप्पुगलूर जाने की प्रवल इच्छा लकर उस ओर चल पडा अप्पर तिरुप्पुगलूर गय और वहा कुछ दिन रहकर उन्होने अडास पडास म बने भगवान शिव क कुछ तीथ स्थला का देखा। जव वह वालक आरूर म लौटा तो दोना आग की यात्रा पर चल पडे और तिरुवीपिमिपल पहुच जहा उस समय अकाल पडा हुआ था। मक्किपार कहत है

जव
चारो ओर ससार था
अकालग्रस्त
और लोग तडप रहे थे,
तव ऐसे दुख के समय मे
मगछाला पहनने
और हाथो मे वल्लम धारण करनेवाले प्रभु
अवतरित हुए 'वालक' और
'अरसर' के स्वप्न मे
और इस प्रकार उस प्रभु ने
जिनकी भूरी है अलक
और जो रहते है
तिरुविपिमिघलई मे, — ति० पद २८६
दया दृष्टि की उन पर।

'हालाकि यह सच है कि तुम समय की इस दशा मे
अपन मन को दुख नही होने दोगे,
फिर भी, हम तुम्हे देते है,
कि तुम भी उन्हे दो,
जो तुम्हारी पूजा करते है'
यह कहकर, प्रभु ने
रख दिया एक एक सिक्का
उन दोनो के सामने

अकाल पीडितो की सहायता के लिए
और हो गए अन्तर्धान—उन दोनों के स्वप्न से
जबकि उस समय भी उनके सामने
प्रभु का स्वरूप अविच्छिन्न था। ति० पद २५७

तिरु ज्ञान सम्बन्धर और अप्पर दोनो ने ही अपने अपने सिक्के उठा लिये और अपने अपने शिष्यो से कहा कि वे उन सिक्कों से खाने पीने की चीजें खरीद लायें। तिरु ज्ञान सम्बन्धर के शिष्यो को सामान लाने में रोज देर हो जाती थी। इसका कारण पूछने पर उन्होंने कहा

हम नही जानते कि बात क्या है
जब हम जाते है
आवश्यक वस्तुएँ खरीदने
उस सिक्के से,
जो आपको उस प्रभु ने दिया है
जो आपके स्वामी हैं,
दुकानदार कहते है,
इस सिक्के को
चालू सिक्को मे बदल कर लाओ
सिक्के बदलनेवालो से,
जबकि वागीशर के दिए हुए सिक्के को,
वे ग्रहण कर लेते है—प्रसन्न होकर।
यही कारण है, हमारे देर से आने का।

तेविरुयार, तिरु ज्ञान सम्बन्धर, पद ५६८

यह सुनकर,
सोचा, तिरु-ज्ञान-सम्बन्धर ने
जो सिक्के भगवान शिव देते है हम दोनो को
उनमे से एक की
कम कीमत मिलती है हमे,
और दूसरा है अच्छा,
पूरे मूल्य का,
इसका कारण है कि दूसरा पैसा मिला है
तिरुनावुक्कुअरसर की अकथ भक्ति और सेवा से
अब मैं भी उस महान प्रभु की
वन्दना के गीत गाऊँगा—

जिससे मुझे भी मिल सके
भविष्य में,
पूरे मूल्य के सिक्के।

ति० पद ५६६

और गाने लगे—
भविष्य में मुझे भी दो प्रभु
पूरे मूल्य का सिक्का
हे मिपूलई के वासी भगवान!
हे निमल प्रभु!
ऐसा करने में नहीं होगा कोई दोष।
हे मिपूलईवासी भगवान
तुम हमारे राजा हो, स्वामी हो,
तुम्ही वेद हो,
इस खोटे सिक्के के बदले
एक सच्चे सिक्के का
दान करो प्रभु।

ति० मु० प्र० १ द० ९२, प० १२

और प्रभु ने उनकी प्राथना स्वीकार कर ली। उस दिन से सम्बन्धर को भी चालू सिक्का मिलने लगा।

तिरुविपिमिपलई के प्रभु से विदा लेकर पिता' और पुत्र' पुन अपनी यात्रा पर आगे चल पड़े और तिरुमरैकाडु जिसे आजकल वेदारण्यम कहते हैं जा पहुँचे। यहा पर चारो वेदो द्वारा मन्दिर के पट बन्द कर दिये गये थे और आज तक कोई उन्हे खोलने नही पहुँचा था। मन्दिर का प्रमुख द्वार बन्द होने के कारण लोग बगल के रास्ते से होकर मन्दिर में जाते थे। तिरु ज्ञान सम्बन्धर और अप्पर प्रभु मुख द्वार के सामने पहुँच कर खडे हो गये। वे बगल के रास्ते से मन्दिर मे नही जाना चाहते थे। 'पुत्र' ने 'पिता' की ओर मुडकर देखा और कहा

द्वार खोलने के लिए प्रभु की प्रार्थना कीजिए। और अप्पर गाने लगे

हे उमापति!
तुम, जिसे
शैलजा की
सगीतमय वाणी बहुत प्रिय है
हे मरैकाडु के प्रभु!
इन बन्द कपाटो को खोल दो—
कि हम तुम्हारे दर्शन कर सकें

और इन नेत्रों को सफल बनाएँ।'

तिमु० प्र० ५ द० १०, पद १

अप्पर एक के बाद दूसरा पद गाते चले गय, किन्तु द्वार नहीं खुला। तब खीज कर अप्पर ने कहा

हे प्रभु ! तुमने,
अपने पाँव के जिस अँगूठे से
राक्षस का नाश किया था,
क्या तुम्हारे मन में किंचित् दया नहीं है !
तुम, जो हमारे स्वामी हो,
तुम, जो मरैकाडु में हो,
उस मरैकाडु में,
जहाँ पुन्नई के वृक्षों से टपक रहा है मधु
अभी, इसी समय खोल दो इन कपाटों को

उपर्युक्त पद ११

और द्वार खुल गय। 'पिता और पुत्र' दोनों ने अन्दर जाकर जी भरकर प्रभु की आराधना की। बाहर आते समय अप्पर ने तिरु ज्ञान सम्बन्धर की ओर देख कर कहा

'अब तुम प्रार्थना करो कि य कपाट बन्द हो जायें। और तिरु ज्ञान सम्बन्धर गाने लगे

हे वीर योद्धा
तुम उस मरैकाडु में बसते हो—
जो ऐसे कुंजों से घिरा है,
जहाँ मधु बरसता है,
जहाँ चारों वेद स्वयं तुम्हारा प्रशस्ति गान गाते हैं।
करो, मुझ पर ऐसी कृपा कि मेरी प्रार्थना से
य कपाट स्वयं बन्द हो जाये।

तिमु० प्र० ११ द० ३७, पद १

इससे पहले कि 'पुत्र' अपने ग्यारह पदों के उस गीत का प्रथम चरण ही समाप्त कर पाता, मंदिर के कपाट एक धमाके के साथ बन्द हो गये। अप्पर ने इस दृश्य को देखा। उन्हें ध्यान आया कि उन्हें अपने गीत के ग्यारहों पद गाने के बाद किंचित् दुःखी और क्रोधित होकर प्रभु के दया न करने के लिए भी गीत गाने पड़े थे, तब, जैसे बड़ी हिचकिचाहट के साथ द्वार खुले थे। यह सोच कर उनके मन में प्रभु के प्रति शिकायत की भावना उत्पन्न हुई और जब वे सोने के लिए गये तब भी उनके मन में यही भावना थी।

रात को उन्हे स्वप्न मे स्वय भगवान शिव ने देवी उमा के साथ दर्शन दिये और आज्ञा दी—

'हम वाइमूर जा रहे है। हमारे पीछे पीछे वहाँ आओ।'

और अप्पर वाइमूर गए। उनके आगे आगे भगवान उसी वेश मे जा रहे थे, जिसमे उन्होने अप्पर को स्वप्न मे दर्शन दिया था। अप्पर उनके पीछे पीछे चलते रहे किन्तु किसी प्रकार वे उनसे आगे नही निकल सके। तब भगवान ने उन्हें और दर्शन करते हुए एक स्वप्न सा दिखाया और सामने एक मन्दिर की ओर इंगित किया। जल्दी जल्दी चलते हुए अप्पर प्रभु के पीछे पीछे मन्दिर मे प्रविष्ट हुए।

अप्पर के प्रस्थान की बात सुनकर सम्बन्धर भी वहा जा पहुँचे। अप्पर मन्दिर मे खडे प्रार्थना कर रहे थे

तुमने मुझे इशारा किया, अपने पीछे पीछे बुलाया और मेरे इतने निकट होते हुए भी अब तुम कही अन्तर्धान हो गये हो। शायद तुमने सजा दी है कि तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध मैंने तुम्हे मन्दिर के कपाट खोलने को बाध्य किया किन्तु जिसने मन्दिर के उन कपाटो को बन्द किया वह भी मेरे ही पास खडा है प्रभु, उससे किस प्रकार छिप सकोगे? और तब भगवान ने पुन' को भी जैसे स्वप्न मे दर्शन दिये। फिर ज्ञान सम्बन्धर ने उस दृश्य की ओर अप्पर का ध्यान आकर्षित किया और तब अप्पर गाने लगे

मैंने सुना भक्तो को भजन गाते हुए
और, मैने भी उस प्रभु की आराधना की,
मैंने देखी
उन भक्तो की एक लम्बी कतार!
मैंने सुनी उन नगाडो की थपथप
जिन पर—
नाच रहे थे राक्षसो के झुण्ड!
मैंने देखा—
वे सुन्दर हाथ
जो अग्निशिखा को थामे हुए थे।
मैंने पवित्र पावनी गगा को देखा
उसके बालो की घुँघराली लटो मे
जिसके चारो ओर
सुशोभित थे अनेक नागराज
और

कान्नार पुष्पों के हार।
मैंने देखा, उसके शीश पर।
सारस के जन्मदाता को।
गोडई को भी मैंने देखा।
मैंने देखा उसके हाथों में खप्पर,
और इस रूप में मैंने वैयामूर के प्रभु के
दर्शन किये।

तिमु० ग्र० ६, द० ७७ पद १

तिरु ज्ञान सम्बंधर और अप्पर तिरुमरैकाडु लौट आये। जिस समय वे दोनों अपने अपने ढंग से प्रभु की पूजा आराधना में लीन थे, मगमरकरसियार के मुख्य मन्त्री कुलचिरयार तथा पाण्डियन के राजा की महारानी द्वारा भेजे हुए दूत तिरु-ज्ञान सम्बंधर के पास आये। उन्होंने उन्हें बताया कि किस प्रकार जैन मठाधीश धर्म के नाम पर राजा के संरक्षण में प्रजा पर अन्याय कर रहे हैं। और तिरु ज्ञान-सम्बंधर ने तुरन्त पाण्डिनाडु जाने का निश्चय कर लिया। उनके इस निश्चय को जानकर अप्पर ने, जो उस समय उनके साथ ही थे, कहा

हे प्रभु!
जैन मठाधीशों के अन्याय का
नहीं है रही अन्त
मुझे तुम्हें बताना है
कि ग्रह नक्षत्र इस समय नहीं हैं अनुकूल
अतः
यह उचित नहीं है
कि तुम वहां जाने की
तैयारी करो।

सेक्किषार तिरु ज्ञान सम्बंधर पद ६५

पुत्र ने उत्तर दिया—
यदि यह सच है,
कि हम प्रभु के चरण कमलों की करते हैं पूजा,
कुछ भी बुरा नहीं हो सकता हमारा।
यह कह कर
पुकाली के उस मुखिया ने
प्रभु के कमल जैसे सुगंधित चरणों में मस्तक नवाया
और सम्मिलित किया अपने

मभी परिजनो को—
उस भजन मे जो आरम्भ होता था
इन शब्दो से—'वेयुरु तोलो' ।

उपर्युक्त पद ६१६

वे गाने लग

वे उमापति,
जिमकी लम्बी बाहे
चिकनी ह, जैसे बास
वह जो है नीलकण्ठ
क्यो कि उसने ही किया था विषपान
वह जो बडे प्रेम से बजाता है
अद्वितीय वीणा
वह
जिसने धारण किया है अपने मस्तक पर
निमल चन्द्रमा और गगा को
जब मे आ ममाया है।
मेरे हृदय मे,
रवि चन्द्र, मगल,
बुध, शनि आदि ग्रह
तथा दोना नागराज
सभी हो गये है
अतिशय दयालु मुझ पर—
सचमुच वे अच्छे है, बहुत अच्छे है,
अपने प्रिय भक्तो के लिए।

तिमु० ग्र० ११, द० ८५ पद १

वह प्रभु शिव
जो धारण करते है गले मे
अस्थियो की माला—
सूअर के दात
और जिसके वक्ष पर झूलती है कछुए की खाल,
वह,
जो अपने परिजनो के साथ
वृषभ पर सवार होकर आते हैं।

और जो सुसज्जित है, धतूरे के फूलों के
सुनहरे हार से
वह जब से मेरे हृदय मे समाये हैं,
आयिल्यम
जो नवा ग्रह है अश्विनी—प्रथम से,
मधम जो नवाँ ग्रह है पहले स्थान से,
और जो नवाँ ग्रह है सातवे स्थान से
वह अठारहवाँ विशाकम
केट्टई
छटा तिरुवादिरै—
और अन्य सभी
वरनी कार्तिकेय पूरम, चित्तिरई
स्वादि, पूराडम पूरट्टादि
सभी हो गये हैं
अतिशय दयालु मुझ पर —
क्योंकि सचमुच वे अच्छे है, बहुत अच्छे हैं
समस्त शिव-भक्तो के लिए।

उपर्युक्त पद २

जब अप्पर ने देखा कि 'पुत्र' ने पाडिनाडु जाने का दृढ निश्चय कर लिया है, तो वे स्वयं भी साथ चलने को तत्पर हो गये। किन्तु 'पुत्र' ने दृढता से उन्हें रुकने के लिए कहा और अकेले ही पाडिनाडु चले गए। अप्पर कुछ दिन और तिरुमरैकाडु मे रुके और तब एक बार फिर तिरुवियिमिलई वासी भगवान शिव के चरण कमलों की आराधना करने की इच्छा उन्हें वहां खीच ले गयी।

१३

एक लम्बी यात्रा

निरुनान सम्बन्धर के साथ साथ अप्पर ने तंजावर जिले के परहालम तालुक में तिरुअम्बूर में लेकर तमिलनाडु के दक्षिणी तट पर तिरुमरक्काडु तक, और फिर थैयामूर में जाकर तिरुमरक्काडु तक जो वहाँ से लगभग सत्तर किलोमीटर दूर है यात्रा की थी। इसके बाद वे निरुनान सम्बन्धर से अलग हो गये जो पांडियन राजा की महारानी और मुख्य मंत्री के साथ मदुरई चले गये थे।

अप्पर इस बात से बहुत परेशान थे कि वह पुत्र' जिसने सम्भवत अभी पूर्णतः किशोरावस्था में भी प्रवेश नहीं किया था प्रभु की इच्छा और आज्ञानुसार स्वतः निश्चय करके अकेला ही इतनी लम्बी यात्रा पर चल पड़ा है जो तमिलनाडु के दक्षिणी तट में स्थित तिरुमरक्काडु से आरम्भ होकर वर्तमान आन्ध्र प्रदेश स्थित तिरुक्कालत्ति तक फैली हुई थी। इसका अर्थ यह था कि इस यात्रा में उसे तमिलनाडु के सुदूर दक्षिणी तट पर स्थित तंजावूर क्षेत्र से चल कर उत्तरी अरकाट अंचल से होते हुए चिंगलपट जिले तक और वहाँ से चलकर वर्तमान आन्ध्र प्रदेश तक जाना था।

कुछ ऐसे नगर थे जहाँ के शिव मंदिरों के प्रति अप्पर के मन में विशेष आकर्षण था। उनमें से एक था तिरुपुगलूर और दूसरा था तिरुविषिमिऴलई। इस यात्रा के दौरान अप्पर नागपट्टिनम होते हुए तिरुवादुतुरई गये और फिर तिरुवादुतुरई से पषयर गये। जिस समय वे वहाँ के पवित्र मंदिर में भगवान शिव का पूजन कर रहे थे उन्हें यह ज्ञात हुआ कि यह वास्तविक प्रतिमा नहीं है। वह मंदिर तो जैन मठाधीशों द्वारा पृथ्वी में मिट्टी पत्थरों से दबाकर गाड़ दिया गया था। उसी समय अप्पर ने उस समय तक भूख हड़ताल करने का निश्चय किया जब तक कि वह मूल प्रतिमा फिर से खोद कर निकाली नहीं जाती और वे प्रभु का पूजन नहीं कर लेते। उनकी इस प्रतिज्ञा से विकल होकर भगवान ने उस प्रदेश के राजा से स्वप्न में कहा

देखो हम कट्टर जैन मठाधीशों द्वारा यहाँ छिपा दिये गए हैं और उन्होंने राजा को वह स्थान बताते हुए मूल प्रतिमा को खोदकर निकलवाने का आदेश दिया।

राजा अचानक नींद से जाग उठा और दोनों हाथ जोड़कर उसने प्रभु को प्रणाम किया फिर अपने मंत्रियों को बुलाकर अपने स्वप्न का हाल सुनाया और

प्रभु का आदेश भी बताया। इसके बाद वह अपने मन्त्रियों को साथ लेकर उस स्थान पर जा पहुंचा जहां अप्पर बैठे थे। उसने उनके चरणों में गिरकर प्रणाम किया और भगवान शिव के आदेश का पालन किया। अप्पर ने वास्तविक प्रतिमा का पूजन किया जिसे राजा ने पृथ्वी के अन्दर से निकलवा कर मंदिर में स्थापित करवा दिया था।

वे कावेरी नदी के किनारे स्थित अनेकानेक तीर्थस्थलों पर भी गये। कुछ समय बाद तिरुवानैक्का, एरुम्बियूर (जिसे अब तिरुवेरुम्बूर कहते हैं) और तिरुप्पराई होते हुए वे तिरुप्पैंगिलि जा रहे थे। रास्ते में वे और थकावट से चूर हो गये। सक्किषार कहते हैं

जब वे बढ़े चले जा रहे थे,
तो बहुत थक गए थे
उन्हें भूख और प्यास ने आ घेरा
और उनकी शक्ति को करने लगी क्षीण।
किन्तु निर्भय वह वाणी प्रवर
चले ही जा रहे थे।

यह देखकर
सघन सुगन्धित कुंज वाले
पैंगिलि में निवास करनेवाले
त्रिनेत्र प्रभु
द्रवित हो उठे—
कि वे दूर कर दें
कष्ट अपने प्यारे भक्त का।
रच दिया उन्होंने अपनी माया से
एक कुंज और एक पोखर,
और आ गये स्वयं वेश धारण कर
एक भस्ममण्डित
ब्राह्मण का,
कि उनका करें मार्गदर्शन।
हाथों में था उनके व्यंजनों से भरा थाल,
और खड़े थे उस राह पर
जहां से होकर जानेवाले थे
वे वाणी प्रवर।

में उड़े थे व महाप्रभु, जिनके दर्शनों को
तरसते हैं नभ में पक्षी की तरह
उड़ते हुए ब्रह्मा,
अथवा स्वयं विष्णु
जो वराह रूप में
खोद डालते हैं पृथ्वी को—
कि प्रभु का शीश मुकुट
या उनके चरण कमल।
मिल जाएँ

अब पहुँचे अप्पर उस जगह
जहाँ प्रतीक्षारत थे
ब्राह्मण रूप में
स्वयं वेदों के राजा
जो वृषभ पर होते हैं सवार,
वे खड़े हो गये उनके सामने और बोले,
'तुम दूर से चले आ रहे हो करते हुए पदयात्रा,
थक चुके हो बहुत तुम,
मैं इसी लिए ले आया हूँ—
यह थोड़ा-सा आहार,
लो, ग्रहण करो इसे
और इस झरने से बह कर आते हुए
निर्मल जल वाले सरोवर का जल पीया।
जब दूर हो जाय तुम्हारी थकान,
चले जाना पथिक,
चल जाना अपनी राह पर।'
और जैसे अप्पर समझ गए सब कुछ
कि यह है दया,
उनके प्रभु की।
उन्होंने तुरन्त ही कर लिया ग्रहण
ब्राह्मण प्रदत्त उस स्वादिष्ट भोजन को
और कहा, 'खाओ।
जी भर कर खाया उन्होंने
तृप्त हुए

पिया निर्मल जल और पा गये छुटकारा
—अपनी थकान से।

तिं० पद २०४७

इस प्रकार प्रभु सदा सवदा अपने सेवकों के बन जाते हैं।

उनकी ओर देखकर
जो अब फिर आनन्दित हो उठे थे
पूछा ब्राह्मण ने
'कहाँ जा रहे हो भाई?'
'मैं तिरुप्पैंगिलि जा रहा हूँ,'
—बोले अप्पर।
ब्राह्मण ने कहा,
'मैं भी तो जा रहा हूँ—वहीं।

यह कहकर ब्राह्मणवेशधारी प्रभु अप्पर के साथ चल पड़े। तिरुप्पैंगिलि पहुँचकर अचानक ही वह ब्राह्मण गायब हो गया। अप्पर ने अनुभव किया कि स्वयं भगवान नटराज ही ब्राह्मण वेश में उनके पास आये थे। उन्होंने गद्गद् हो कर कहा, मेरे प्रभु ने अपने इस दास को अपनी दया के योग्य समझा और वे प्रभु का भजन गान में तल्लीन हो गये। उस समय उनकी आँखों में अश्रु की अविरल धारा बह रही थी। अप्पर उन मन्दिरों में भी गये—जहाँ भगवान का वास है, और जो पावन पर्वतों, मैदानों और तीर्थस्थलों में स्थित थे। ऐसे अनेक स्थलों में अप्पर तिरुप्पैंगिलि से चलने के बाद गये और अन्त में वे तिरुवन्नामलई जा पहुँचे।

अप्पर की यात्रा एक ऐसी विश्वास की यात्रा थी, जो तिरुमरैकाडु से नागपट्टिनम त्रिचुरापल्ली तिरुवन्नामलई, और वहाँ से मद्रास के आस पास कांची, तिरुवक्कुइम तिरुवान्मीयूर मद्रास के उत्तरी छोर पर मालापुर तिरुवेत्तियूर होती हुई तिरुक्कालत्ति जाकर समाप्त हुई। यहाँ के बारे में किंवदन्ती है कि एक सर्प और एक हाथी ने एक साथ मन्दिर में भगवान शिव की पूजा की थी। यह स्थान कालित्व के पास एक पहाड़ी पर है। यही वह स्थान है जहाँ उस प्रभु का वास है जिसके बारे में किंवदन्ती है कि कन्नप्पर ने अपनी आँख निकालकर उनकी उस प्रतिमा में लगा दी जिसमें से बुरी तरह लहू बह रहा था। हर प्रकार से कन्नप्पर उन सभी सन्तों में सबसे पुराने सन्त प्रतीत होते हैं, जिनका वर्णन सक्किळार ने अपने पेरियपुराणम में किया है।

अप्पर पर्वत पर चढ़कर उस स्थान पर जा खड़े हुए, जहाँ सदियों पूर्व भगवान ने कन्नप्पर को, जो अपनी दूसरी आँख भी निकालने के लिए तत्पर हो गए थे

हाथ थाम लिया था, और कहा था, 'रुको, कनप्पर !' उस दिन से शिकारी का पुत्र, जिसका नाम जन्म के समय से तिन्नाप्पन था कनप्पर के नाम से प्रसिद्ध हुआ और जिसे भगवान शिव ने स्वयं उसे प्रदान किया था।

कन्नप्पर पर भगवान ने जो दया दृष्टि की थी, उसके स्मरण से विचलित हो कर अप्पर गाने लगे

देखो—उस निर्धन की ओर देखो
जो अपने लिए भोजन भी नहीं जुटा सकता।
देखो,
उस अपूर्व याची के 'खप्पर' को देखो
जिसके पास
भगवान की दया भिक्षा के अतिरिक्त
कुछ भी नहीं है खाने के लिए।
देखो,
श्मशान के उस वीर की ओर देखो—
दोषरहित स्वर्णखण्ड (अग्नि शिखा) की ओर देखो।
देखो उसे जो बहुमूल्य जवाहरातों के पर्वत जैसा है,
देखो,
पत्थर की इस चट्टान को देखो,
जो सातों संसार को—
बलपूर्वक थामे हुए है!
देखो,
असुरों (राक्षसों) के उस राजा की ओर देखो
जिसे मैं देख रहा हूँ—
कालत्ति में—वह मुझ में है।

तिमु० ग्र० ६ गीत ८ पद १

यही वह स्थान था, जहाँ अप्पर के हृदय में कैलाश पर्वत पर जाकर भगवान शिव के दर्शन करने की अदम्य लालसा ने जन्म लिया।

१४

कैलाश को ओर

मक्तिपार न तिखा है

जन्म और मरण के रोग चक्र का
जो एकमात्र निदान है
और जा वास करता है—
पवता पर
ऐसे प्रभु की आराधना कर,
और प्रभु के वरदान से प्राप्त कर
उसके प्रति प्यार और आदर से पूण
और एक आन्तरिक इच्छा के वशीभूत होकर
वे चल पड़े—
उत्तर दिशा की ओर।
अनेक ऊँचे-ऊँचे पवतो को लाघते,
कल कल करती सरिताओ को पार करत
अनेक प्रदेशो को
बिना कही रुके पार करते हुए
वे जा पहुँचे
तिरुपरुपदम—
जहा है निवास उस महान प्रभु का,
जिनकी बडी बडी आखे हैं,
और जो स्वय भगवान विष्णु हैं। पद ३४८

यहाँ पर अप्पर ने तिरुपरुपदम के भगवान का जिन्हे मल्लिकार्जुनम भी कहत है पूजन किया। मारुतम वृक्ष को संस्कृत म अर्जुनम कहते हैं और चूकि इस पहाड़ी प्रदेश म यह बहुत अधिक पाया जाता है इस इसी नाम स जाना जाता है। तमिलनाडु म दा और स्थान एस है जिनका नाम भी इसी कारण स इसी प्रकार वृक्षो के नाम पर रखा गया है। इनम से एक है तिरुविडईमरुदूर, जो चोलनाडु म है।

सक्किपार न आग लिखा ह

अप्पर चले थे
केवल यही विचार कर
कि जायेंगे उस कैलाश की ओर
जो हिमाच्छादित है
और जहां वास है—
त्रिशूलधारी प्रभु का
वे नहीं चाहते थे
अन्य कोई भी स्थान देखना।
घिरे हुए अपने भक्तों में—
वे जा पहुँचे कर्नाटक
पार कर के आन्ध्र की सीमा

उपर्युक्त पद ३५०

जब पहुँचे वे उस स्थान पर
जहां समाप्त होती थी
काली मिट्टी वाले प्रदेश—'कर्नाटक' की सीमा,
वे चल पड़े आगे, और आगे
पार करते हुए जंगलों को,
चिह्नित करते हुए उन सभी सीमारेखाओं को,
जिन्हें वे छोड़कर आगे बढ़ जाते थे
पीछे छोड़ते हुए
पावन नदियों के घाटों को
और ऊँची-ऊँची पर्वतमालाओं को—
हरे भरे मैदानों को पार करते हुए
जा पहुँचे वे मालवा—
जहां ऊँचे-ऊँचे वृक्षों से भरे
जंगलों को पार करने में असमर्थ
सूर्य भी लौट जाता है।
उस प्रदेश को पार करके
कठिन रेगिस्तानों में होकर
अपने पीछे छोड़ते हुए लाढा प्रदेश
जहां अनगिनत हैं धर्मशालाएँ
मेघाच्छादित पर्वतों,
जंगलों और सारी सीमाओं को लांघते हुए
वे जा पहुँचे

मध्यवर्तिरम में जहाँ कमल के
फूलों से सुशोभित ताल थे

उपर्युक्त पद ३५१ ५२

कर्नाटक राज्य की सीमा पार करने समय अप्पर ने गोकरणम् की यात्रा भी की, जो मामगोआ और मंगलूर के पश्चिमी तट पर स्थित है। तमिलनाडु के संतों में से केवल अप्पर ही इस तीर्थस्थल पर गए थे। यहाँ के मन्दिर में स्थापित शिव-लिंग की विशेषता के कारण ही इस स्थान का नाम गोकरणम् पड़ा है। इस शिव-लिंग का आकार गऊ के कान की तरह है। इस लिंग के सामने खड़े होकर अप्पर ने प्रार्थना की

यही है वह स्थान,
जहाँ भगवान शिव का वास है
देखो, उसकी ओर देखो, जिसने मिलन कराया है
चन्द्रमा और गंगा के निर्मल जल का—
देखो, उसकी घुंघराली अलकों को देखो,
देखो उसे, जो अमृत बन जाता है
अपनी शरण में आनेवालों के लिए
देखो, उसकी ओर जिसने नष्ट कर दिये थे
असुरों के वे तीन स्थान—
जो हवा में लटके हुए थे,
देखो, उस प्रभु की ओर देखो
जो वही रूप धारण कर लेता है
जिस रूप में उसके भक्त उसकी पूजा करते हैं।
देखो, उसकी ओर देखो
जिसने चारों वेदों का मधुर स्वरों में गान किया है,
देखो, उसे जो वैदिक मन्त्रों में छिपा हुआ है,
वही बसा है समुद्र से घिरे, गोकरणम में—
सदा और सर्वदा। तिमु० ग्र० ६ द० ४६, पद १

आगे सेक्किषार ने लिखा है

अप्पर ने यह प्रदेश भी पार किया—
जिसके चारों ओर है वही पावन गंगा,
जो आकाश से उतरकर,
हिमालय की गोद में मचलती है,
धरती पर बलखाती और बहती है।

वाराणसी में वास करनेवाले शिव की
जिनकी घुघराली हैं जटाएँ—
अप्पर ने बहुत लगन से,
बड़ी निष्ठा से आराधना की
यहीं पर उन्होंने,
उन सबको पीछे छोड़ दिया,
जो अब तक उनके साथ चले आ रहे थे
और गंगा को पार करके
वह शब्द चतुर अप्पर
हिमालय के चरणों में जा पहुँचे।

उन्हें नहीं थी चिन्ता
कि सामने है सघन जंगल
जहां ऊंचे ऊँचे वृक्ष खड़े हैं सिर उठाये
—कि उन्हें नहीं मिल रही है—
कोई एक पगडण्डी भी,
जिससे वे जंगल को वेधकर
आगे बढ़ सकें,

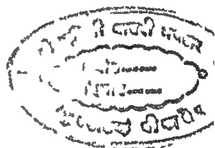
वे तो प्रभु के स्नेह में
इतने भीग चुके थे
तन से, मन से
कि उन्होंने छोड़ दिया
खाना सूखी पत्तियां, कन्द मूल और फल भी।
और चलते रहे, चलते रहे
दिन और रात और जा पहुँचे
अजेय कैलाश पर्वत पर।

ऐसे भक्त की राह में
—जो घोर अँधकार में भी बढ़ा जा रहा था
अपने लक्ष्य की ओर—
जो आने से डरते थे
—वे नृशंस और खूंखार जानवर भी
जो प्रसिद्ध हैं अपनी निर्ममता के लिए।

बहुमुखी सर्प, विष का अम्बार लिए विषैले नाग—
और राह प्रज्वलित कर देते थे
अपनी मणियों से।
इस प्रकार अप्पर
बढ़ते चले गए उस वीरान पहाड़ी मरुस्थल की ओर
जिसे देवता भी
पैदल पार करने में डरते हैं। ति० पद ३५३-५५

दिन में जब सूर्य की प्रखर प्रचंड किरणें उस भूमि पर पड़ती थीं तो पृथ्वी के अन्दर रहने वाले कीड़े मकोड़े भी तिलमिला उठते थे और सघन छाया वाले स्थान भी अग्निकुंड से प्रतीत होने लगते थे। पर अप्पर अदम्य साहस के साथ आगे बढ़ते जा रहे थे। सेक्किषार आगे लिखते हैं

इस प्रकार दिन और रात,
वह चलते गये
उन वीरानों में—
जिन्हें कठिन था पार करना,
उनके कमल जैसे पाँव छिल गये थे
और हड्डियाँ निकल आयी थीं,
किन्तु क्या वे भूल सकते थे—
अपना परम उद्देश्य
कि उन्हें पहुँचना है
उस हिमाच्छादित पर्वत-शिखर पर
जहाँ उमापति का वास है।



अपने दो हाथों का
लेकर सहारा
कठिन राहों पर वे बढ़ते ही जा रहे थे।
उनकी हथेलियाँ छिल गयी थीं
और कलाइयों में
आ गई थी मोच
किन्तु यह स्नेहतरंग,
जो हो रही थी प्रवाहित
उनके मानस से समस्त शरीर में
वे और अधिक उद्दीप्त हो उठी थी।

अब प्रभु का वह भक्त
बेदम—
उस राह को हृदय से लगाये
छाती के बल चढने लगा था
जिसमे से—
भयकर ताप के कारण उठ रहा था धुँआ-सा

जब अप्पर की छाती का मास भी छिल गया
और बिखरता चला गया उस लम्बी राह म,
पसली की हड्डिया तक
चटक गयीं।
लेकिन फिर भी, अप्पर का
मन मस्तिष्क केवल
प्रभु के ध्यान म डूबा हुआ था।
और उस कठिन लक्ष्य को पाने के लिए आतुर था,
उस लगन में प्रभावित होकर ढूढा अपने प्रभु को।
अपने जर्जर और कृश शरीर को लेकर
वे राह पर जैसे—
लुढकते से चले जा रहे थे—
जहाँ कोई भी व्यक्ति पहुँच नही सकता।

इस प्रकार उस राह पर
जब वे बढते जा रहे थे,
उनका समस्त शरीर लुज हो चुका था,
केवल उनका ध्यान ही आगे-आगे चल रहा था
और चलकर उस
अवणनीय कलाश—शिखर तक जा पहुँचा था।

जहाँ तक, शरीर का था सम्बन्ध
जब समस्त अग शिथिल हो गये
और आगे रेगने का भी रहा नहीं
कोई सवाल
तब भी उस दुदमनीय राह पर
लेटा हुआ था—
तमिल का वह महान सत।

प्रभु,
वह महान प्रभु,
जिसने डाल रखी है गले मे
सर्पो की माला,
और जिसने अपनी कृपा-दृष्टि
अब तक नही की थी
उस सत पर
—जो कैलाश की ओर बढता चला जा रहा था
व्यग्रता से—
कि उसका यह भक्त
अभी पृथ्वी पर कुछ दिन और
मधुर तमिल म उनका भजन करे,

फिर आये वहाँ प्रभु,
ऋषि का वेश धारे—
हाथ म था उनके, जल से भरा कमण्डल
जिसके सहारे वे जा सकते थे—
अपनी राह पर
बहुत दूर तक।

वह आये
आकर खडे हो गये
अप्पर के पास
देखा उन्होंने—
शिकायत भरी दृष्टि से उनकी ओर
और अप्पर से नजरें मिलने पर
पूछा उन्होने
'क्या कारण है,
आये हो तुम इस दिशा की ओर
इस कठिन दुगम जगल मे—
जबकि तुम्हारा शरीर जजर हो चुका है।'

देखकर तपस्वी की ओर
जिनकी कमर मे लिपटी थी वृक्षो की छाल,
और जनेऊ था, जिनके वक्षस्थल पर,
जिनके मस्तक पर, जटाएँ फैली थी—
और शरीर मे सुशोभित थी भस्म
अप्पर, महान अप्पर ने सारी शक्ति बटोर कर कहा—

'मैं आया हूँ यहा
बहुत प्यार से,
यह देखने कि किस प्रकार,
विश्व का पालनहार रहता है
कैलाश के शिखर पर
शैलजा के साथ—
जिस पर्वत माता के वक्षो पर मधुमक्खियाँ भी
उसकी आराधना मे गुनगुनाती है,
हे महाराज !
यही है मेरा ध्येय।'

उसके यह वचन सुनकर प्रभु ने कहा,
'क्या उस मनुष्य के लिए,
जो पृथ्वी पर रहता है
उस कैलाश शिखर पर पहुँचना इतना सरल है ?
उस शिखर तक
देवता भी नही पहुँच पाते
जिनके हाथो मे होता है कोदण्ड
तुम इस भयकर वीरान स्थल मे
जो सूर्य की गर्मी से
तप रहा है,
क्या कर रहे हो ?
यहा से वापस चले जाओ,
यही है तुम्हारा कर्त्तव्य।'

सुनकर महर्षि वचन
जिनका शरीर था भस्मावृत्त

और वक्ष पर जनेऊ
अप्पर ने कहा—
'नहीं, जब तक मैं कर नहीं लेता दर्शन उस
कैलाशवासी प्रभु के, जो हमारे रक्षक हैं,
मैं नहीं लौटूंगा—
चाहे मुझे क्यों न करना पड़े
मृत्यु का भी आलिंगन !'

देखकर अप्पर का दृढ़ निश्चय
अंतर्धान हो गया वह तपस्वी
कि अप्पर जान जायें
कि वह कौन था—
और उसी समय हुई आकाशवाणी
हे वाणी प्रवर !
हे महान साधक !
उठो।'
और अप्पर उठ खड़े हुए—
उनका शरीर हो गया एकदम स्वस्थ
और मुखमण्डल दमक रहा था—
आंतरिक आभा से !

'हे महाप्रभु !
तुमने मुझे बना लिया है अपना दास
हे वेदों के रचयिता
तुम आकाश में छिपकर
कर रहे हो मुझ पर अपनी दयादृष्टि !
कृपा करो मुझ पर—
कि मैं पहुँच सकूं तुम तक
और देख सकूं—
तुम्हें कैलाश शिखर पर विद्यमान
और कर सकूं तुम्हारी आराधना।'
कहकर वे प्रभु के चरणों में गिर पड़े।

अपने ऐसे भक्त को
जो उनकी आराधना कर

इतना ऊँचा उठ चुका था,
प्रभु ने गम्भीर और पवित्र वाणी मे
दिया आदेश
'इस ताल मे कूदो
और हम पवित्र तिरवैयार मे स्थापित देखो
ठीक उसी प्रकार
जैसे हम रहते हैं—कैलाश पर।'

अप्पर ने उठाया अपना मस्तक
प्रभु का यह आदेश सुनकर,
जिन्होंने की थी कृपा उन पर
वह बहुत प्रसन्न हुए—
सुनकर उस प्रभु का
आदेश
जो मनुष्य के साथ होते हुए भी
रहता है उनसे दूर आकाश मे—
और आराधना करने लगे उसकी।

अपनी शक्ति का कर पुन सचय,
उन्होने रहस्यमय पचाक्षरो का किया गान,
और
जैसा दिया था
प्रभु ने आदेश
कूद पडे
पास के तालाब मे।

ति० पद ३५६-७०

१५

दक्षिण कैलाश

सेक्किषार ने आगे लिखा है

कौन समझ सकता है
अनादि अनन्त प्रभु की महानता को ?
हमारे संत ने
जिन्होंने भोगे थे
अनेक शारीरिक कष्ट
उस तालाब में डुबकी लगा दी
जिसमें तर रहे थे
असंख्य पुष्प
जिनके ऊपर चमक रही थी जैसी ओस की बूंदें मुक्ता जैसी
और महान आश्चर्य कि वे जा पहुँचे
अइयार के एक कुएँ में
जिसमें उमापति का था निवास
और फिर उसमें से
निकलकर आ गये बाहर।

उस कुएँ की दीवार पर
चढ़ रहे थे जब अप्पर—
जिसमें खिले थे अनेक सुगन्धित पुष्प
उन्हें ज्ञान हुआ देवाधिदेव भगवान शंकर की
महिमा और महानता का
और उन्होंने कहा,
'यही है, यही है प्रभु की अपूर्व कृपा का फल।'
वे खड़े थे उस स्थान पर
नयनों से बह रही थी आँसुओं की धारा—
और आर्द्र था समस्त शरीर
जैसे वे अभी
तैर कर निकले हों कुएँ से।

अप्पर आगे बढे—
अइयार नगर के निवासी प्रभु के
चरणों की पूजा करने के लिए
जहाँ गली गली म
मजे क वन्दनवार
और देखा उन्होंने
कि चल, अचल सभी अपने-अपने
साथियों के साथ हो उठे थ
ज्योतिमय !
हमारे महान संत ने अभिवादन किया
सभी प्रकार के जीवों का
जो लग रहे थे, शिव और शक्ति जसे
और जिन्होंने बदल दिया था अइयार को
उस हिमाच्छादित पवत शिखर म
जहाँ है वास प्रभु का
शैलजा के साथ—
इस प्रकार देखते हुए उस जुलूस को
अप्पर जा पहुँचे महाप्रभु के मन्दिर।

वाणी-प्रवर ने देखा,
सामने था विशाल मन्दिर
जो बदल चुका था
कलाश पवत के रूप मे
उन्होंने सुना,
वहाँ स आ रही थी
प्रभु का प्राथना समर्पित भाव से
भजन संकीतन की ध्वनि
जिन्हे गा रहे थे
विष्णु ब्रह्मा, इन्द्र जैसे वडे वडे देवता—
सभी के मन मे था, प्रभु का ध्यान
उन्होंने सुनी
प्रतिध्वनि, सभी वेदों द्वारा की गयी
स्तुति की
—जो हर वार होती जा रही थी
तीव्र मे तीव्रतर।

उन्होने देखा—
एकत्र हो गये है
सुर, असुर, सिद्ध, ज्ञानी, (विघ्नतारर)
ऐयाकर, महान तपस्वी, योगी और मुनि
ढोल की थाप पर गाते हुए,
जिसे वजा रहे थे अरम्वियार
लज्जा से झुक जाते थे
नीलकमल और नगी तलवारे
इतनी प्रचण्ड थी वह ध्वनि
कि दव गया था
साता समुद्रो का गजन भी।

उन्होन देखा,
वटी वडी पवित्र नदियो का जल
गगा के पीछे-पीछे आ कर
परिणत हो गया पावन सरोवरो मे
कि उस जल से—
प्रभु की पूजा सम्पन्न की जा सके

उन्होने सुना,
प्रभु के अनुयायियो ने
हर सम्भव स्थान को—
उनकी आराधना से कर दिया अभिमण्डित
उन्होने देखा,
प्रभु के सेवक भूत-पिशाच गण
उनकी उपासना मे
वाद्य यन्त्र वजा रहे है
जिनमे से
उठ रही है सगीत की लहरिया
प्रभु का वाहन वृषभ
इस प्रकार खडा था प्रभु के सामने
अपने दो विशाल शृ गो के साथ
कि मानो हो वे
दो हिमाच्छादित पवत।

अप्पर जो मिला था श्रेय अग्रगमन का,
अपने तप के बल पर,
उससे प्रसन्न होकर,
वे नदी और भक्तो के बीच से स्थान बनाते हुए
आगे चले गये।
वहाँ हमारे उस वाणी प्रवर ने देखा,
कि प्रतिष्ठित थे
दयालु प्रभु गिरिराज कुमारी के साथ
जो विराज रही थी उनके वाम भाग मे।
ऐसे लग रहे थे, भगवान शिव
मानो खडी हो मूगे की—
चट्टान
जो चमक रही हो
एक पारभासी दीप्ति मे
और पन्ने की वल्लरी
छा गयी हो हिमगिरि शिखर पर।
उन्होने
अपने आँखो मे भर लिया
आनन्द सिन्धु को
और फिर हाथ जोडकर भूमि पर गिर पडे।
उठे, और फिर लोट गये उस प्रभु के सामने।
अपनी प्रकम्पित देह लिए खडे थे
वे विश्व के स्वामी
भगवान शिव के सामने—
कभी नाचने लगते
कभी गाने लगते
और कभी रोने लगते।
कौन कर सकता है वर्णन
कि प्रभु के इस सच्चे सेवक
का उस क्षण मे
कितना आह्लाद हो रहा था ?

ति० पद ३७१ ८०

इस प्रकार भगवान शिव ने अप्पर को ठीक वही रूप दिखा दिया जिस रूप मे वे कैलाश पर्वत पर वास करते है।

भावाकुल और विभोर होकर अप्पर प्रभु की धूसर जटाओ, वेशो का वर्णन करने लगे। जब वह दृश्य उनकी आखो से ओझल हो गया, तो भक्तो के भक्त एक बार फिर आकुल हो उठे कि कुछ देर और वे इस मनोहारी दृश्य से अपने नेत्रो को तृप्त कर सकते, किन्तु अन्तत उन्होने यह कहकर स्वय को सात्वना दी—'सम्भवत इस समय प्रभु की केवल इतनी ही कृपा है मुझ पर' और फिर भजन मे लीन हो गये

इस अदम्य इच्छा के वशीभूत होकर,
कि मे चल सकू
उन सभी के पीछे,
जो पत्र पुष्प लेकर जा रहे थे मन्दिर मे
उस प्रभु का कीर्तिगान करते हुए
जिसके शीश पर सुशोभित है अर्धचन्द्र का मुकुट
और जिसके वाम भाग मे विराजमान है
गिरिराजकुमारी उमा,
जब मै अइयारु जा रहा था,
बिना कोई पदचिह्न छोडे
अपने पीछे, मैने आते देखा
विशालदन्त गजराज को
अपनी प्रिया के साथ,
मैने देखा, प्रभु के पावन चरणो को
और देखा—एक ऐसा अपूर्व दृश्य
जैसा पहले कभी नही देखा था।

तिमु० प्र० ४, द० ३, पद १

मैं आया—नाचता और गाता
प्रभु के गीत,
और कहता रहा—
'हे पावन प्रभु ! तुम धन्य हो।'
मैं उस प्रभु के भजन गाता रहा—
जिसके मस्तक पर चन्द्रमा है
और उस देवी की आराधना करता रहा—

जो फूल से भी अधिक कोमल
कन्या से सुशोभित थी।
जब मैं आड्यार जा रहा था
जहाँ चक्रधारी भगवान विष्णु
उस प्रभु की पूजा कर रहे थे
मैंने देखा, पक्षियों के जोड़ों को,
चुपचाप वहाँ आते हुए
और देखा,
प्रभु के पावन चरणों को
ऐसा दृश्य देखा मैंने—
जैसा कभी न देखा था पहले।

उपर्युक्त पद ~

उन्होंने देखा
धारीदार बटर को अपनी प्रिया के साथ
मुर्गे को अपनी प्यारी मुर्गी के साथ,
मोरनियों को अपने मोरों के साथ आते हुए
रंगबिरंगी चिड़ियों को
अपने जोड़ों के साथ फुदकते हुए
गर्जन करते हुए सुअर को उसकी मादा के साथ,
काले गुरिल्ल को अपनी प्रियतमा के साथ
सारस को अपनी सीधी-सी मादा के साथ
हरे तोते को उसकी मादा के साथ
और वृषभ को गाय के साथ
सभी आ रहे थे उस राह पर—
अपने अपने जोड़ों में।

(उपर्युक्त) एक पंक्ति, पद ३ के उपरान्त

अप्पर ने अपनी आंखों से वह अद्भुत अपूर्व दृश्य देखा था—जो कोई नहीं देख सकता था—उन्होंने प्रत्येक जीव में प्रभु के दर्शन किए। उन्होंने अपने चारों ओर देखा—और उन्हें केवल प्रभु ही दिखाई दिये—विभिन्न रूपों में और आकृतियों में।

१६

विनम्र ही शक्तिशाली होते हे

बहुत अनिच्छापूर्वक तिरुवैमारूर से जब अप्पर चले तो अनेक तीर्थस्थलों के दर्शन करते हुए अंत में तिरुप्पानतत्ति पहुँचे। इस स्थान ने उन्हें बहुत आकर्षित किया और वे यहाँ काफी समय तक रहे। यहाँ के शिवमन्दिर में बैठकर उन्होंने प्रभु की प्रार्थना में अनेक गीत रचे। केवल यही एक स्थान है जहाँ अप्पर ने मठ की स्थापना की जहाँ भक्तगण पीढ़ी दर पीढ़ी रह सकें और भगवान शिव की आराधना कर सकें तथा शैव धर्म का अनुपालन कर सकें।

यहीं पर अप्पर ने अपने धर्मसार को प्रतिपादित करते हुए यह पद रचा

कोई बात नहीं
कि वे मेरे ऊपर न्यौछावर करते हैं
सगनिधि और पद्मनिधि[1]
अथवा
धरती और स्वर्ग का राज्य—
हम नहीं सँजोयेंगे
उनकी यह
नष्ट हो जानेवाली सम्पदा
यदि वे नहीं हैं महादेव के,
हमारे प्रभु शंभु के
अनन्य उपासक।
साथ ही,
चाहे वे ऐसे लोग हों
जिनके हाथ पाँव गल गये हों कोढ़ से
और
चाहे वे हों कसाई
जो भले ही खाल खींचते हैं गो माता की—
और भक्षण करते हैं

---

१ सगनिधि पद्मनिधि सम्पत्ति एवं जैसे शंख और ... के अन्य ऊँचे आँकड़े।

गोमान रा,
यदि वे सच्चे भक्त हैं उस प्रभु के
जिसकी जटाओं में सुशोभित है गंगधार
गुना ध्यान में मुग्ध, वही हैं न भगवान
जिनकी हम करते हैं पूजा

तिमु० प० ६ द० ६१, पद १

इस प्रकार अप्पर ने शैव सिद्धान्त में प्रतिपादित इस आदर्श का पालन करते हुए भजनों की रचना की कि शिव भक्तों को भगवान शिव के समान ही पूजा जाना चाहिए। यही था वह मूलमन्त्र, शिव भक्तों के उस आदर्श का जिसमें पंथ जाति धर्म भाषा और लिंग का कोई विचार नहीं था।

जिस समय अप्पर वहाँ ठहरे हुए थे तिरु ज्ञान सम्बन्धर जैन मठाधीशों को धार्मिक वाद विवाद में परास्त करके और पांडियन महाराज के कूबड़ को पवित्र भस्म की अद्भुत शक्ति द्वारा सीधा करके उस स्थान की ओर चल पड़े थे। यह सुनकर कि योगिराज पूंदुरुत्ती में ठहरे हैं उन्होंने अपने भक्तों से कहा मैं शीघ्र ही वहाँ पहुँचूँगा और शहर के बाहरी भाग में जा पहुँचे।

वागीशर जो अब तक बहुत प्रसिद्ध और संसार में पूजनीय भी हो चुके थे, यह जानकर बहुत प्रसन्न हुए थे अपनी आँखों से सच्चाई में जन्मे उन तिरु ज्ञान-सम्बन्धर को जो तमिल भाषा के विद्वान थे—अपनी आँखों से जी भरकर दर्शन करने के लिए तथा उनसे मिलने के लिए अत्यन्त इच्छुक होकर चल पड़े।

जिस स्थान तक तिरु ज्ञान सम्बन्धर आ पहुँचे थे वहाँ जाकर अप्पर भक्तों की उस टोली में मिल गये जो उन्हें घेरे हुए थी। वहाँ उन्होंने चुपचाप बालक को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की और स्वयं से कहा

'मैं उस रत्नजटित पालकी को अपने इस बूढ़े शरीर से उठाऊँगा, जिस पर वह बालक' विराजमान है जो इस क्षेत्र के लोगों को एक नया जीवन देने आया है।' यह सोचकर वे आगे आए और उन्होंने लोगों के साथ मिलकर उस पालकी को कंधा दिया और प्रसन्न चित्त होकर आगे बढ़े। उनकी ओर किसी ने ध्यान नहीं दिया। सेक्किषार ने लिखा है

मार्ग में संत तिरु ज्ञान सम्बन्धर ने पूंदुरुत्ती के पास पहुँचकर पूछा—

'कहाँ हैं अप्पर ?'
द्रवित हृदय में कहा अप्पर ने,
'मैं आपका दास—
आपकी कृपा का पात्र बनकर

आग पाकर आपके चरणो की सेवा का
पाकर आशीर्वाद यही पड़ा हूँ'
इतना सुनते ही—
बालक कूद पड़ा
पालकी मे—
और दु खी मन से
अप्पर के पास आकर उनके चरणो म
गिर पड़ा।
किन्तु
इससे पहले कि बालक का शरीर
छू पाता भूमि को—
स्वय वाणी सम्राट ने साष्टाग प्रणाम किया।
हाथ मे
मृगछाला लिए हुए
प्रभु के भक्तो ने
इस अद्वितीय घटना को देखकर
जोर जोर से
जयघोष किया
और दोनो की पूजा की।

ति० पद ३१६ १७

तिरुवल्लुवर ने कहा था—

विनम्र ही सदा और सर्वदा शक्तिशाली होंगे।

चीन के गूढ रहस्यो को प्रतिपादित करने वाले चुआगसे, तथा सत लाओत्से ने वल्लुवर से सदियो पूर्व उपनिषद लिखनेवाले महात्माओ के समान अपनी दस पीढ़िया स पहले के पूर्वज वाले चर्मेफू द्वारा छोडे एक अभिलेख का इस प्रकार प्रतिपादन किया है जैसे वे तिरुक्कुरल सूत्र की अग्रिम टिप्पणी लिख रहे हो

जब मेरी पहली बार पदो नति हुई मैंने अपना सिर झुका लिया। दूसरी बार पदोन्नति होने पर मैंने अपना कमर तक झुककर आभार प्रदर्शित किया। तीसरी बार पदोन्नति होने पर मैंने साष्टाग दडवत किया। मैं गलियो के किनारे खड़ा ऊची दीवारो के पास गया किन्तु किसी का भी साहस नही हुआ कि मेरा अपमान कर सके।'

जहाँ तक साधारण व्यक्तियो का प्रश्न है' चुआगसे ने लिखा है पहली पदोन्नति पर उनके कदम लड़खड़ाने लगते हैं। दूसरी बार

ज्योति पर व आगमार्ग में जलने लगते हैं। जब तीसरी बार ज्योति जली तो स्वयं भी बुझने लगते हैं।

इस मंदिर के मधुर मिलन की यह एक ऐसी अद्वितीय घटना है, जो दुबारा कभी नहीं घटी और जो विश्वनाथ के प्रति शक्तिशाली बाला का एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

१७

उपसहार

तिरु ज्ञान सम्बन्धर न अप्पर को मदुर म जन मठा रानी मगैयर्करसी की प्रशस्ति करन की गाथा सुनायी जिसे सुनकर अप्पर के हृदय म मदुरे के मन्दिर म निवास करने-वाले प्रभु के दर्शन करन तथा पाडियनाडु का दर्शन की इच्छा जागत हो गयी। अप्पर मदुरै जा पहुच जहाँ मुख्य मन्त्री महाराजा तथा महारानी न उनका भव्य स्वागत किया। उनस विदा लकर व दक्षिण की ओर और आगे चल पडे और रामेश्वरम पहुच गय। यहा उन्होंने उन प्रभु के दर्शन किय जिनकी पूजा भगवान राम न की थी और फलस्वरूप व रावण का वध करके उसके पापो का फल दे सकन म सफल हुए थे, जो इस दड का भागी होते हुए भी एक ब्राह्मण था।

अब अप्पर पुन उत्तर दिशा की ओर चल पडे और पूम्पुगलूर पहुँचे। यही वह स्थान था जिसकी स्मृतियाँ उनके लिए बहुत सुखद थी, क्योंकि यहा तिरु ज्ञान-सम्बन्धर म भेंट होन पर व दोनो लगभग एक वर्ष तक साथ रह और उन्होंने भगवान शिव के अनक मन्दिरो के दर्शन किय।

यही पर अप्पर न अनेक दर्शन लिये और एक लम्बे समय तक प्रभु की सेवा करत रह। प्रभु की सेवा करन का उनका अनोखा तरीका था—मन्दिर के परिसर का घास फूस से रहित रखना और रास्त म पडे पत्थरो का हटाना।

जिस समय व अपन इस काय म सलग्न थ, भगवान शिव न उनक सामन एक एक बाधा डाल दी। इसका उद्देश्य उनकी परीक्षा लने का उतना नही था, जितना ससार को यह बताना था कि अप्पर कितन विरागी व्यक्ति थ। इच्छाओ का दमन एक ऐसा अन्तिम और आवश्यक अनुशासन है जिसका पालन मोक्ष की कामना करन वाल प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त करना ही पडता है। यह स्मरण रखना चाहिए कि तिरुक्कुरल म वास्तविकता को पकड विषय के अध्याय के पश्चात इसी विषय पर अध्याय लिखा गया है, क्योंकि व्यक्ति मात्र का स्वाभाविक रूप स स्वय का किसी न किसी स सम्बन्ध करना पडता है। यदि वह एक चीज को छोडता है। तो किसी दूसरी चीज स जुड जाता है। तभी तो तिरुवल्लुवर न कहा है

उस प्रभु से नाता जोडो
जो किसी से जुडा नही
उस वन्धन मे बँधे रहो,

तांकि तुम
इनके बंधनों से हो सको विमुक्त।'

प्रभु की इच्छा थी कि जहाँ भी अप्पर का दण्ड चले, धूल मिट्टी और बालू के साथ साथ स्वर्ण और बहुमूल्य जवाहरात भी ऊपर आ जाय। इसलिए जब सचमुच ही मिट्टी और बालू में से हीरे जवाहरात तथा स्वर्ण की नन्ही नन्ही गालियाँ बाहर निकलीं तो अप्पर ने उन्हें अपने को दण्ड पर उठाकर धूल के साथ साथ पास के ही एक कुएँ में उछाल दिया जिसमें सुर्ण धन कमल के फूल खिले हुए थे। सेक्किदार ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है

तब,
हमारे संत
उस मन स्थिति में पहुँच चुके थे—
जहां
कर नहीं सकते थे भेद—घास और बालू में
स्वर्ण और हीरे-जवाहरातों में,
तिरुपुगलूर स्वामी प्रभु की इच्छानुसार
आकाश से उतरी अप्रतिम अप्सराएँ
ऐसे थे जिनके ललाट—
जैसे खिंचे हुए धनुष
वे नाचती रहीं, गाती रहीं
और फूलों की वर्षा करती रहीं—
उन पर
उनके पास आइ
कुछ इस प्रकार कि वे उन्हें
समेट लेंगी अपने बाहुपाशों में।
अपनी घुंघराली अलकों को लहराती,
इठलाती,
चली गयी उनसे दूर
वे फिर लौट कर आयीं—मदन के साथ
और, आखों में भरकर वासना का सागर
घूमती रहीं उनके चारों ओर,
या खड़ी रहीं उनके सामने—
अस्तव्यस्त और उन्माद-ग्रस्त।

किन्तु अप्पर ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया और वे अपने कार्य में संलग्न रहे। उन स्वर्ग से उतरी अप्सराओं ने अपने छल का उन पर कोई प्रभाव न देखकर उनके प्रति सम्मान व्यक्त किया और वापस चली गयी।

अप्पर जो इस परीक्षा में सफल हुए थे, कुछ दिन वहाँ और रहे। तब उनके हृदय में प्रभु के चरणकमल रूपी स्वर्ग में पहुँचने की अदम्य लालसा जाग उठी और उन्होंने कहा :

विचारक हूँ मैं,
किन्तु
यदि मैं प्रभु के चरणों का ही ध्यान न करूँ
तो
मैं कैसे रहूँ, और किसका ध्यान करूँ ?
मैं, जिसका और नहीं है कोई सहारा,
अंधा हो जाऊँगा—
यदि देख न पाया
केवल तुम्हारे ही अलङ्कृत चरण !
हे प्रभु !
तुमने दी है मुझे यह काया
जिसके हैं नवद्वार।
जब सब कपाट हो जायेंगे एक साथ बन्द
तब,
नहीं अनुभव कर सकूँगा मैं यह सब।
इसलिए हे प्रभु !
अभी, अभी और यहीं
मैं आता हूँ आपके चरणों की शरण में !
हे पून्तुरुत्तूर में रहनेवाले मेरे प्रभु !
मैं आ रहा हूँ।

तिरु० ग्रं० ६, द० ६६, पद १

और इसके साथ ही अप्पर ने अपना नश्वर शरीर त्याग दिया और सदा-सर्वदा के लिए प्रभु के चरणों में जा बैठे।

१८

अप्पर का सदेश

निभयता विश्वास विनम्रता और सवा—इन्हा शब्दा म अप्पर क जीवन का इतिहास नि िन ह।

जब पल्लव महाराजा ने अप्पर का अपा दरबार मे उन पर विश्वासघात, पाखड और धम विराध का मुकदमा चलान क लिए बुलाया था तो अप्पर न कहा था

'हम किसी के अधीन नही हैं।
हमे नही है किसी का भय
हमार ऊपर
कोई भी विपदा आ नही मक्ती।'

यही शब्द थे जिनक सहारे उ होन उस पागल हाथी का सामना किया जा एक पहाड की तरह उनक सामन आकर खडा हो गया था और उह सूड स उठा कर भमि पर पटकर रौद सकता था और उनके शरीर का क्षत विक्षत कर सकता था। भगवान कृष्ण ने अजुन का सुर और असुर प्रवत्तिया क विषय म (भगवदगीता १६—१) बताते समय निभयता का उन बत्तीस गुणा म सर्वोपरि माना है जो देवताओ म पाये जाते है। तमिलनाडु को याय की राह दिखानवाले तिरवल्लुवर न कहा है भय सचमुच ही बुर यक्ति म सद यवहार लान का आधार है।

जिस क्षण म अप्पर आदि कई श्रीगत्तनम म प्रभु शिव के मदिर म गय जहा उनकी बहिन न उ ह धम का विराध करन के आराप का प्रत्युत्तर दन क लिए खडा किया था उनक हृदय म भय कपूर की भाति उड गया था। उस सर्वोच्च यायाधीश के यायालय म उन्होने निभय होकर जारदार शब्दा म कहा था कि व निर्दोष है। उस समय ता ऐसा प्रतीत हाता था माना व निभय हान का प्रयास कर रहे हैं क्याकि उन पर जा आरोप लगाय गये थ वे बहुत भयकर थ। कोई भी गुनहगार इतनी निर्भीकता मे स्वय को निर्दोष नहीं कह सकता।

पल्लव महाराजा द्वारा लगाये गय आरोपा क खडन का यह उत्तर उसी निर्भीकता स उपजा था जा उनके हृदय मे राजाआ के राजा प्रभु की सभा म असीम विश्वास क कारण उत्पन्न हुई थी। अपने हृदय स भय का परित्याग कर देन के कारण ही व कह सके थ

यह विस्तृत विश्व ही है हमारा देश।
हर नगर और ग्राम में
कोई भी, जो पाता है भोजन,
खायेगा उसे वह तभी
जब अर्पित कर देगा किसी अतिथि को,
और
कभी नहीं चखेगा वह किसी भिखारी को
दान से भिक्षा।
हमारे आश्रय हैं सम्मिलित आंगन।
पृथ्वी माता कभी नहीं,
कभी नहीं हटायेगी उनको, जो
पड़े हैं उसके वक्ष पर।
यह कोई झूठी बात नहीं है,
सचमुच ही—एक ध्रुव सत्य है यह।
उस प्रभु ने,
जिसके पास है नन्दी जैसा विशाल वाहन,
उसने हमें समेट रखा है, अपने अंक में।
हममें
नहीं है कोई भी दोष।
नहीं हैं अब हमारे मन में इच्छाएँ, अभिलाषाएं
हम पा चुके हैं मुक्ति इनसे।
हम बाध्य नहीं हैं
कि सुनें
उनके आदेश
जो,
घूम रहे हैं इधर-उधर
सजे हुए,
सुन्दर वस्त्रों और स्वर्णिम आभूषणों से।

तिमु० ग्र० ६, द० ९६, पद २

इस निर्भीकता का सार इन शब्दों में है कि जिस प्रभु ने हमें अपना अंक दे रखा है, उसे किसी का आतंक डरा नहीं सकता। एक अन्य स्थान पर अप्पर ने कहा है— हम प्रभु के संरक्षण में रहने वाले उपभोगी हैं।'

भक्त सत पाल न अपन प्रसिद्ध साहित्यिक ग्रंथ म यहूदियो से कहा

'और विश्वास क्या है ?
विश्वास मे मिलता है बल हमारी आशाओ को
और हम उन सत्यो के प्रति हो जाते है विश्वस्त
जिन्हे हम देख नही सकते।
उन्ही के विश्वास के लिए बन जाते है
दस्तावेज
बीते हुए कल के लोग।'

विश्वास की महत्ता और जीत क विषय म कई उदाहरण दन के पश्चात सत पाल न भी अ त म कहा था

> क्या अब भी मुझ कुछ और कहन की आवश्यकता है ? मेरे पास सच-मुच इतना समय नही है कि मैं गिडियन बरक सैम्सन और जेफ्ता, अथवा डेविड सैम्युअल तथा अन्य सतो की विस्तार स चर्चा कर सकू। विश्वास क सहारे ही उ होन राज्यो का तख्ता पलट दिया था न्याय की स्थापना की थी और प्रभु के वादो को पूरा होते देखा था। उन्होने गरजत हुए सिंहो का सामना किया अग्नि की लपलपाती लपटो की पिपासा शात की और तलवारो के वार स भी मत्यु पर विजय पायी। उनकी दुबलताए ही उनकी शक्ति बन गयी युद्ध मे वे शूरवीर बने और उन्होन बाहरी आक्रमणकारियो की फौजो को भगा दिया। महिलाओ को दुबारा उनके मत आत्मीय जीवित होकर मिल गय। उनम से कुछ लोगो को अ तिम सास तक कष्ट और पीडा दी गयी उन्ह छोडा नही गया कि वे पुन नया और बहतर जन्म ले सकें। कुछ अन्य लागो को उपहास बेत की मार और यहा तक कि कारागार और बेडियो क बधन भी सहन पड। उन पर पत्थर फेंके गय उन्ह आरी से दो टुकडो म चीर दिया गया उन पर तलवार चलायी गयी और भेड बकरियो की खाल पहनकर गरीबी और दुख स चूर इधर उधर घूमत रह। व इस ससार म रहन योग्य नही थे क्योकि व बहुत अच्छे थ। वे रेगिस्तानो पहाडो म रहनवाल एस शरणार्थी थ जो गुफाओ और भूमि के अदर गड्ढो म छिपत फिरत थे। य सभी प्रभु म अपन दृढ विश्वास के लिए स्मरणीय है।

एसा ही अखड विश्वास अप्पर की निर्भीकता का आधार था। और यही उनक आत्मविश्वास, साहस तथा दृढ सकल्प का स्रोत था।

इस श्रद्धा से उत्पन्न आत्मविश्वास के कारण ही अप्पर ने अप्पूति आदिहल के ज्येष्ठ पुत्र को प्रभु की आराधना में दस तक गिनती पूरी करते करते जीवित करने का प्रयोग किया था। और इसी विश्वास और श्रद्धा ने ही उन्हें यह साहस व मनोबल प्रदान करने की क्षमता दी थी जिसके कारण वे कानातिर से कैलाश तक पैदल चल सके, पूरे उत्साह के साथ आगे बढ़ सके, और छाती के बल रेंगकर यात्रा पूरी कर सके अन्यथा और कुछ भी उन्हें जीवित नहीं रख सकता था। यही नहीं, इसी विश्वास के कारण ही कैलाशवासी भगवान शिव की आज्ञा से वे मानसरोवर में कूद सके थे और तिरुवैय्यारु के कुएँ में पहुंचे।

विश्वास से पर्वत भी ढह जाते हैं। दूसरों की सेवा करना ही अप्पर का धर्म था। वे सेवा करने के लिए ही इस संसार में आये थे। जब वे धनाढ्य जमींदार थे उन्होंने तालाब खुदवाये, कुएँ बनवाये, प्याऊ लगाये, धर्मशालाओं के लिए धन दिया, विद्वानों को पुरस्कृत किया और निर्धनों को खुले हाथों से दान दिया। इनकी उचित प्रशंसा न कहा था।

कोई भी व्यक्ति उतना ही धनी होता है, जितनी वह अपनी सामर्थ्य के अनुसार अच्छाइयाँ करता है।' अप्पर इतने ही धनी होना चाहते थे इसलिए उन्होंने 'श्रमदान' भी आरम्भ कर दिया। प्रभु के मंदिरों की झाड़ पछाड़ मिट्टी और बालू से बचाने के लिए वे शारीरिक श्रम करते थे कि प्रभु के भक्तों के पैरों में कहीं काँटे न चुभ जायें, अथवा चोट न लग जाय। इस प्रकार वास्तव में वे प्रभु के भक्तों के चरण कमलों की ठीक उसी प्रकार से पूजा करते थे—जिस प्रकार उन्होंने उस 'बालक' के नन्हें पैरों को पूजा था जो अभी तरुण भी नहीं हुआ था, क्योंकि अप्पर की शक्ति उनकी विनम्रता में ही थी।

हमारे इस संसार के लिए, जहाँ हम नित्य उद्वेग से थरथराते हाथों से प्रातःकालीन समाचार पत्र खोलते हैं, अप्पर ने निर्भीकता, विश्वास, स्वेच्छा से धारण की गयी निर्धनता, सेवा भाव और विनम्रता का ही संदेश दिया है।

नालवारों में अप्पर का स्थान

तिरुज्ञान सम्बंधर, अप्पर अथवा तिरुनावुक्करसर, सुन्दरमूर्ति स्वामिकल और मानिक्कवाचकर को लोग प्यार से नालवार कहते हैं। इन चारों में मानिक्कवाचकर सर्वप्रथम थे जो तीसरी शताब्दी में हुए थे। तिरुज्ञान सम्बंधर और अप्पर जैसा कि हम पढ़ चुके हैं समकालीन थे। सुन्दरमूर्ति स्वामिकल उनके एक शताब्दी बाद हुए। मानिक्कवाचकर का विशेष ग्रंथ था तिरुवाचकम, जो रहस्यमय आध्यात्म विद्या की एक पुस्तिका है। इसमें आत्मा द्वारा परमात्मा में लीन होने के प्रयासों का विवरण है। इन पदों का करुणा, उत्कंठा, निवेदन, स्वनिन्दा एवं प्रेम में विश्वास का ऐसा प्रभाव है कि इन सभी ६५६ पदों को पढ़कर आँखें नम हो जाती हैं।

तमिल भाषा में लिखे गए भक्ति साहित्य में यह अद्वितीय है। अप्पर के गीत बहुत सुन्दर हैं, फिर भी उनमें ऐसा आकर्षण नहीं है।

तिरुवाचकम का विषय भगवान शिव के तीर्थ स्थलों की यात्रा नहीं है। मानिक्कवाचकर का ध्येय यह नहीं था कि वे लोगों को अपने धर्म के महात्म्य की ओर आकर्षित करें और उनमें भी कहीं कम था उनका यह ध्येय कि वे अन्य धर्मों के प्रभाव को दूर रखने का प्रयास करें। तिरुवाचकम तो ऐसी आत्मा की कथा है जो प्रभु से चिरमिलन के लिए राह खोज रही है। यह एक आध्यात्मिक वधू और पावन वर की कहानी है जिसमें उनके प्रेम तथा मिलन का वर्णन किया गया है। इस कथा में वधू स्वयं मानिक्कवाचकर हैं। अप्पर का विशेष क्षेत्र तिरुत्ताण्डगम है किन्तु प्रभाव में उनका स्थान मानिक्कवाचकर के समान नहीं हो सकता। लेकिन यह अप्पर की दुर्बलता नहीं है। मानिक्कवाचकर का मुकदमा एक ऐसे अभियोगी का मुकदमा है जो कभी करुण होकर और कभी उत्तेजित होकर अपने जीवन की याचना कर रहा है।

यहाँ सुन्दरमूर्ति स्वामिकल के बारे में दो शब्द कहकर उनकी बात समाप्त की जायगी। अप्पर की १२५ तीर्थस्थलों की यात्रा तथा उनके ३१२ दशकों के मुकाबले, जिसमें ३०६४ पद हैं, इसके मुकाबले सुन्दरमूर्ति स्वामिकल की ८३ तीर्थ यात्राएँ, सौ दशक तथा १०२६ पद कहीं स्थान नहीं पाते। उनके अतिरिक्त सुन्दरमूर्ति स्वामिकल के तेवारम का अध्ययन करने पर ऐसा लगता है जैसे हम एक ऐसे दरबारी अथवा ढीठ भिखारी की प्रार्थना सुन रहे हैं, जो अपना पारि-

वारिक कठिनाइयां से दुखी और त्रस्त है यथा दो स्त्रियों के प्रेम की, दो स्त्रियों से विवाह की और दो परिवारों का भरण पोषण करने की परेशानी। यह सच है कि सुन्दरमूर्ति स्वामिकल के लिए एक असुविधा यह भी थी कि उनमे कुछ ही समय पूर्व प्रभु के दो परम भक्त तिरुज्ञान सम्बन्धर तथा अप्पर हो चुके थे। यह भी संयोग ही है स्वयं सुन्दरमूर्ति स्वामिकल ने, अचेतन एव सरल भाव से ही अपने एक गीत मे लिखा है कि वे अपने पूर्वजो के कहे हुए शब्दों को ही दुहरा रहे हैं।

यदि कोई सही तुलना की जा सकती है तो वह केवल अप्पर और तिरुज्ञान-सम्बन्धर के बीच ही की जा सकती है। अप्पर की उल्लिखित रचनाओं के मुकाबले मे तिरुज्ञान सम्बन्धर ने २१९ तीर्थ यात्राएं की थीं, ३८८ दशक लिखे, जिनमे कुल मिलाकर ४१६२ पद थे। यद्यपि इस प्रकार उन्होंने अप्पर से अधिक कार्य किया फिर भी तमिलनाडु के जनसाधारण के हृदय पर अप्पर के ही गीतों का कही गहरा प्रभाव पडा। कहते हैं कि इस शताब्दी के पूर्वार्द्ध मे हुए एक प्रसिद्ध विद्वान का, जो लगभग प्रतिदिन अनेक साहित्यकारों को अपने घर आमन्त्रित करते थे, और जिसे लोग एक महान उपलब्धि समझते थे, कथन था कि तिरुज्ञान-सम्बन्धर के गीतों मे चापल्य अधिक है और वे बहुत उपयुक्त नही हैं। सम्भवत वे यह भूल गये कि तिरुज्ञान सम्बन्धर वस्तुत बालभक्त ही थे, जिनमे आश्चर्य करने की एक अद्वितीय प्रतिभा थी। अत उनकी कविताओं मे उनका बचपन झांकता झलकता है—और यही उपयुक्त भी है। उनमे कभी कभी एक ही बात बार बार दोहरायी गयी है जो किसी भी बालक की विशेषता होती है। एसे उनके गीतों मे प्रकृति के आश्चर्यों के प्रति और आतंकित चकित होने का भाव भी है जो बच्चों की एक और विशेषता होती है। ऐसे बालक की अभिव्यंजना की तुलना तब एक प्रौढ सत की रचनाओं से करना जो अनेक परीक्षाओं और यातनाओं की घडियो मे तपकर पावन हो चुके थे, इस बालक के प्रति अन्याय करना ही है।

संसार मे, तिरुज्ञान सम्बन्धर के पक्ष मे सारी बाते कहने के पश्चात मैं यह भी मानता हूँ कि वे अपने ३८३ दशकों मे कही भी भक्ति की उस पराकाष्ठा तक नही पहुँचते, जो अप्पर षष्टम तिरुमुर के निन्ताण्डकम् मे नियानवें दशकों के प्रत्येक ९८० पदो से झलकती है। किन्तु संसार मे इन दोनो का काय भिन्न था। अप्पर तो एक पश्चाताप करनेवाले प्रार्थी एक मुमुक्षु मुक्ति को पाने के लिए आकुल व्यक्ति थे। उनके गीतो मे हृदय का अवसाद झलकता है। दूसरी ओर तिरुज्ञान सम्बन्धर मुमुक्षु नही थे। वे तो ईश्वर कोटि मे थे जो अपने पूर्व जन्म मे मुक्ति पा चुके थे। उनकी आत्मा मे पिछले जन्म के कर्मों के कारण जन्म नही लिया था। तिरुज्ञान सम्बन्धर की आत्मा

और वम ता बहुत पहल ही एक दूसरे से विलग हो चुके थे। उनकी आत्मा अपनी इच्छा से मानवता का उद्धार करने के लिए इस ससार म आयी थी। कारण है कि निरुपान सम्बन्धरर का स्पश, नयन अथवा मन्त्र दीक्षा आ तिरुवदि दीक्षा भी नही मिली थी, जिसम भगवान शिव अथवा गुरु अपन प्र शिष्य के हृदय पर अपन चरण रखते हैं। तिरुनावुक्करसु घर के मित्रा मानिक वाचकर सुन्दरामूर्ति स्वामिगल और अप्पर—इन सबने निरुवदि दीक्षा प्राप्त थी, उन्होन बाद पाप नही किया था, जिसे वे स्वीकार करते। उनमे कोई प नही थी, जिसे प्रकाश म लाया जाता। श्री रामकृष्ण परमहस के शब्दा म जीवकोटि नही, ईश्वरकोटि थे। इन परिस्थितियो म उनकी तुलना अप्पर सुन्दरामूर्ति स्वामिगल अथवा मानिक्कवाचकर से करने का कोई अर्थ नही है। तो एक अनोखे व्यक्ति थे।

साहित्य की सर्वश्रेष्ठ रचना का उद्गम होता है आकुल अंतर प्रेम दुख अं पीडा से भरा हुआ हृदय। और अप्पर का हृदय सचमुच एसा ही था। अत य कोई आश्चय की बात नही है कि अन्य दोनो सन्तो की अपेक्षा उनके गीत जन साधारण मे अधिक प्रचलित हुए, क्योकि इन गीतो स उनमे आशा और प्रेरणा का सचार होता है।

□□